चन्दामामा
जुलाई १९९५
Rs. 5

BACK TO SCHOOL WITH CHELPARK
chelpark
WAX CRAYONS
chelpark
CHELPARK RANGE OF PRODUCTS
WAX CRAYONS, WATER COLOUR CAKES, PEN, PENCIL, INK, OIL PASTELS,
MOPPLES COLOUR SET. WATER COLOUR SET.
chelpark
CHELPARK COMPANY PVT. LTD.
A-93, Industrial Estate, Rajajinagar,
Phone: 91-080-3351562/3351694
Bangalore - 560 044
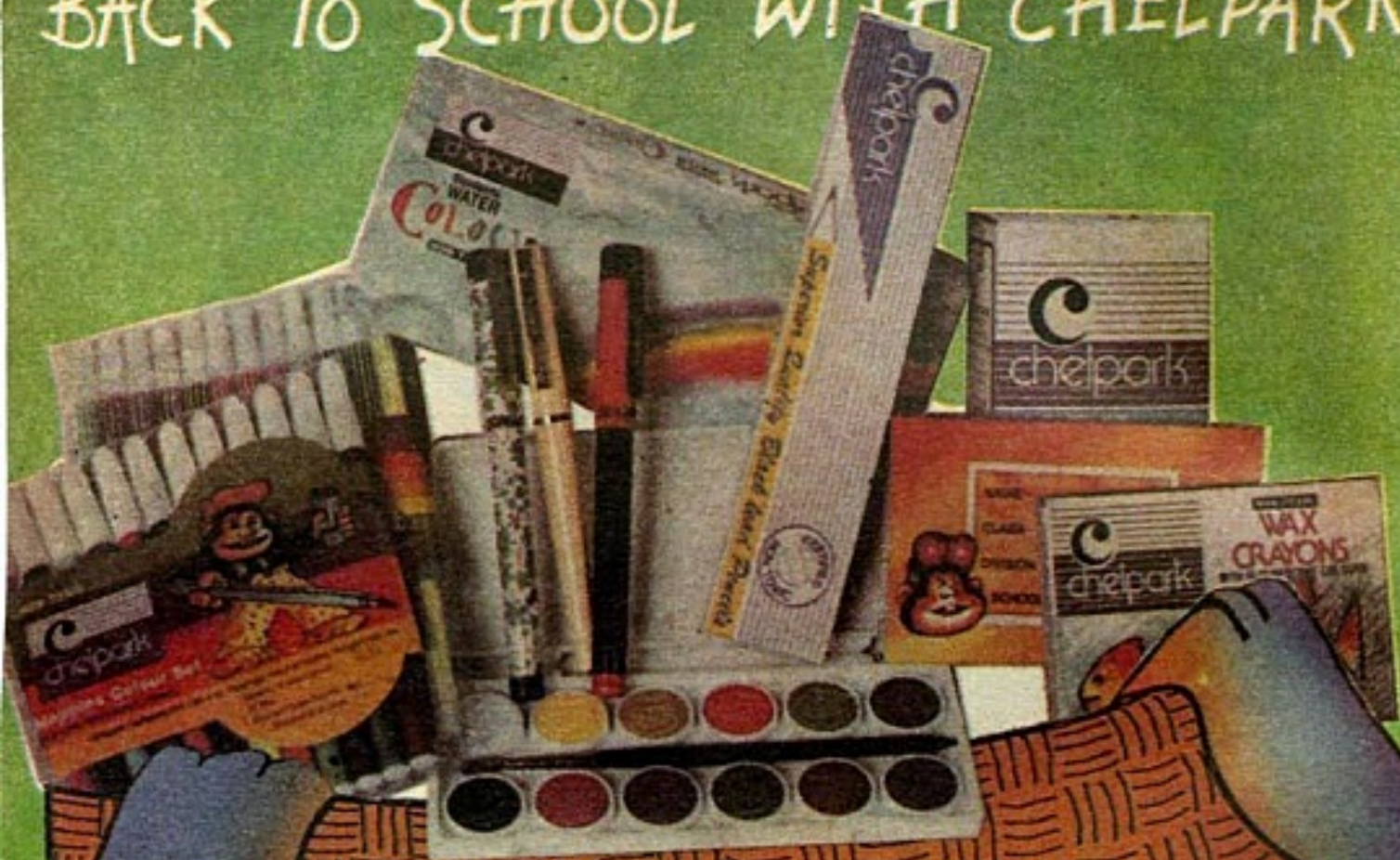
# चन्दामामा

जुलाई १९९८

**एक प्रति : ५.००**

**वार्षिक चन्दा : ६०.००**

# चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

## राजनीति व पाठशालाएँ

नया शैक्षिक वर्ष शुरू होनेवाला है। विद्यार्थी अपने अध्ययन में पुनः मग्न हो जाएँगे। अधिकतर पाठशालाओं की कक्षाओं में कक्षा-नायक के चुने जाने की पद्धति है। इस पद्धति से आशा की जाती है कि इससे विद्यार्थियों में नेतृत्व के गुणों का विकास हो सकता है। ऐसे गुणों को पनपाने के लिए ही यह पद्धति अमल में लायी जा रही है।

अध्यापक अपने छात्रों में से उसी छात्र को कक्षा-नायक चुनते हैं, जिसमें उसके लिए आवश्यक योग्यताएँ तथा गुण हों। प्रधान अध्यापक पाठशाला में अनुशासन को बनाये रखने के लिए एक सुयोग्य विद्यार्थी को नायक चुनता है। इस चुनाव के पहले वह पाठशाला के अन्य अध्यापकों की राय लेता है। देखा जाता है कि पाठशाला में उसका व्यवहार कैसा रहा, अन्य सह-विद्यार्थियों के साथ कैसे पेश आया और क्रीड़ा-स्थल पर उसका क्या रुख रहा। कक्षा-नायक तथा पाठशाला के नायक को कुछ जिम्मेदारियाँ सौंपी जाती हैं। कुछ अधिकार और कुछ सुविधाएँ भी उन्हें दी जाती हैं। ज़रूरत पड़ने पर वे इनका उपयोग कर सकते हैं।

इस पद्धति में बाहर की शक्तियों की दखलंदाज़ी हानिकारक है। इससे पाठशाला का अनुशासन टूट सकता है, विद्यार्थियों में मन-मुटाव पैदा हो सकते हैं और अध्यापक के भी अलग-अलग गुटों में बंट जाने की संभावना है।

हाँ, यह तो सच है कि स्वतंत्रता-आंदोलन के दौरान विद्यार्थियों को भी आजादी की लड़ाई में भाग लेने को कहा गया। भारतीय दलों और उनके नेताओं के नेतृत्व में उन्होंने इस लड़ाई में सक्रिय रूप से भाग लिया। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भारत में कई राजनैतिक दलों की स्थापना हुई। वे सब राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए विद्यार्थियों को आह्वानित करने लगे। पाठशालाओं और कालेजों के चुनावों में भी ये दल अपना-अपना पार्ट अदा कर रहे हैं। अवश्य ही इसका परिणाम बुरा ही हुआ है।

इन बुरे परिणामों के शिकार हुई केरल की दो पाठशालाओं में सर्वेक्षण हुआ। सात प्रश्नों की प्रश्नावली में उनसे पूछा गया कि क्या आप अपने बच्चों को राजनीति में भाग लेने देंगे ? यह पसंद करेंगे ? इस सर्वेक्षण से स्पष्ट हुआ कि कोई भी माता-पिता, राजनैतिक नेता अथवा सत्तारूढ़ व्यक्ति इसके पक्ष में नहीं है। वे बच्चों का, राजनीति की ओर झुकाव बिल्कुल पसंद नहीं करते।

जब यह सर्वेक्षण प्रकाशित हुआ, तब मुक्त कंठ से इसका समर्थन हुआ।

अब वक्त आ गया है कि राजनैतिक नेता विद्यार्थियों से अपने को दूर रखें, और उन्हें मग्न होकर पढ़ने दें। शैक्षिक संस्थाओं में राजनीति का प्रवेश ना ही आवश्यक है या न ही वांछनीय।

वर्ष : ४८ जुलाई १९९५ अंक : ११

एक प्रति : रु. ५/- वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

यही है प्राइम की विजेता रेखा.
आ गए, उत्कृष्ट दर्जे के कम्पास बॉक्स. यह अचूक कामगिरी, संपूर्ण नियंत्रण एवं उत्कृष्ट कार्यकुशलता के लिए खास तौर पर तैयार किए गए हैं.
तो दीजिए अपने नन्हें-मुन्नें को प्राइम. जिसके सहारे वो चढ़ता जाए कामयाबी की सीढ़ियां, और बने विजेता.
PRIME LEADER
PRIME GENIUS
MATHEMATICAL DRAWING INSTRUMENTS
PRIME RANK
PRIME MERIT
प्राइम मेरिट
प्राइम रैंक
प्राइम जीनियस
प्राइम लीडर
मैथमेटिकल ड्रॉइंग इन्स्ट्रुमेंट्स
PIDILITE PRODUCTS
PID 63 95 HIN
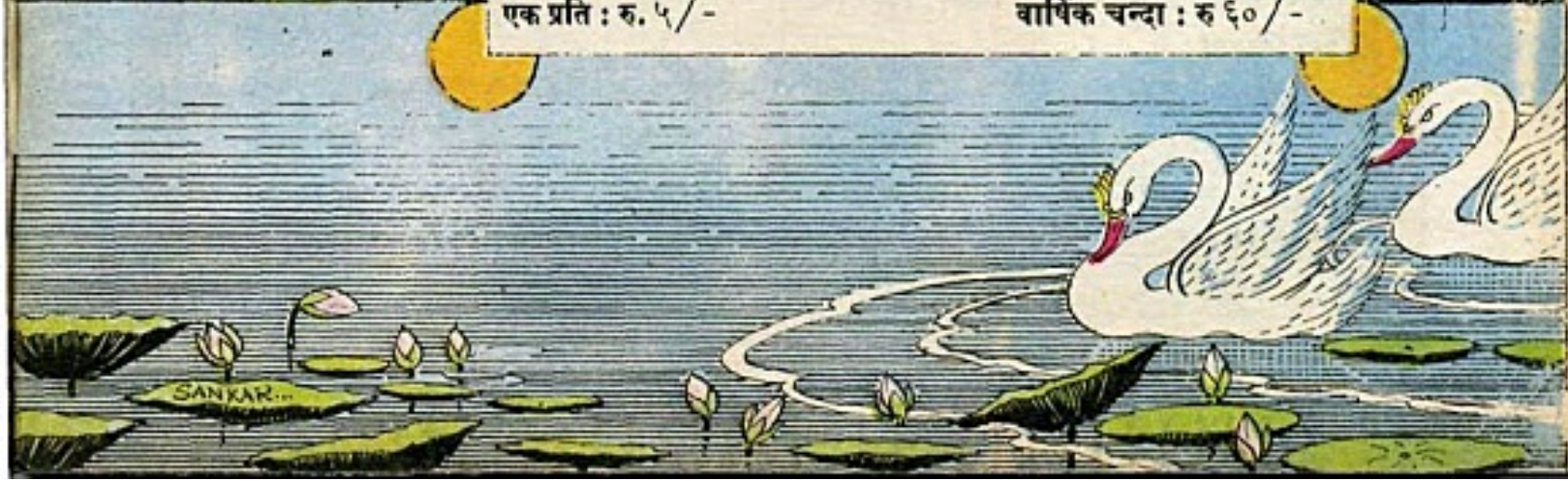
समाचार - विशेषताएँ

# फ्रांँस के नूतन अध्यक्ष

मई सत्रह को ब्याक चिराक फ्रांस के नूतन अध्यक्ष चुने गये। दस दिनों के पहले चुनाव हुए। इस चुनाव में चिराक कन्सरवेटिव गालिस्ट दल के उम्मीदवार थे। उन्होंने विरोधी सोशलिस्ट लयोनिल जानसन को ५२-४८ प्रतिशत से हराया। चौदह सालों से सोशलिस्ट ही शासन करते आ रहे थे। चिराक की विजय ने उन्हें पद-च्युत कर दिया। सुदीर्घ काल तक फ्रांस के अध्यक्ष बने रहे फ्राकोइन मिट्टेरांड। उन्होंने चिराक को १९८१ तथा १९८८में अध्यक्ष-पद के लिए हुए चुनावों में हराया। अस्वस्थता के कारण उन्होंने चुनावों में इस बार भाग नहीं लिया।

द्वितीय विश्व-युद्ध के उपरांत (१९३९-१९४५) जनरल चार्लस डिगाल फ्राँस के अध्यक्ष बने। उन्होंने फ्राँस में सुस्थिरता स्थापित करने का भरसक प्रयत्न किया। किन्तु फ्राँस के उपनिवेशों (इंडोचीन वर्तमान वियतनाम, कांबोडिया, लावोस) की वजह से गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ा। उन्होंने पहले पहल उन देशों से फ्राँस की सेनाओं को वापस बुला लिया। फिर उन्हें स्वतंत्र घोषित किया। १९६८ में अध्यक्ष-पद से इश्तीफ़ा दिया, फिर भी उनके सिद्धांतों ने तदनंतर आये हुए नेताओं को बहुत ही प्रभावित किया।

समाजवादी नेता मिट्टेरांड १९८१ में फ्राँस के अध्यक्ष चुने गये। उस समय फ्राँस की आर्थिक स्थिति बहुत ही क्षीण थी, बेरोज़गारी का समस्या गंभीर थी। देश इन समस्याओं से अति पीड़ित था। ऐसी परिस्थिति में एक समाजवादी नेता का अध्यक्ष-पद के लिए चुना जाना श्रेयस्कर माना गया। लोगों को लगा कि अब फ्राँस का भविष्य सुनहरा होगा। चौदह सालों के शासन-काल के बाद उन्होंने चिराक को सत्ता सौंपी।

१९९३ में पार्लमेंट के जो चुनाव हुए, उसमें कन्सरवेटिवों को अधिक मत मिले। गालिस्ट दल के नेता एडवर्ड बल्लादुर प्रधान मंत्री बने। कहते हैं कि इस कम समय में उन्होंने बेरोज़गारी की समस्याओं को दूर करने की कोशिशें की। पर समालोचकों का कहना है कि यह झूठ है। बल्लादूर भी अध्यक्ष-पद के उम्मीदवार थे, लेकिन पहली बारी में ही वे हार गये। अलैन जुरसे को प्रधान मंत्री बनाया गया।

ब्याक चिराक ६२ वर्ष के हैं। अपने तीस साल के राजनैतिक जीवन में दो बार याने १९७४ से ७६ तक और १९८६ से ८८ तक प्रधान मंत्री रहे। इसके पहले जब वे कृषि मंत्री थे तब सेब के निर्यात की दिशा में बहुत ही परिश्रम किया। इस वजह सेबा के निर्यात में फ्राँस ने विश्व में द्वितीय स्थान पाया। चिराक पारिस के मेयर भी थे, जब वे अध्यक्ष पद के लिए चुने गये। सेब को अपने चुनाव का चिन्ह बनाया।

मई १० को चुनावों को जीतने पर जो विजयोत्सव हुए, उनमें जनता ने आशा व्यक्त की कि भविष्य उज्वल होगा। चिराक ने घोषणा की कि बेरोज़गारी की समस्या का हल ही हमारा परम लक्ष्य है।

# तड़प

वह बहुत बड़ा जंगल था। पड़ोस ही के पीला नामक गाँव में सुशील रहता था। गाँव के लोगों का कहता था कि वह किसी भी मुश्किल काम को करने की क्षमता रखता है। ज़रूरत पड़ने पर लोग उसकी सहायता माँगते थे। सुशील बिना किसी झिझक के उनकी ज़रूरत पूरी करता था। अपनी इस प्रवृत्ति पर उसे गर्व भी था।

अब सुशील पचास साल का हो गया। फिर भी उसका दावा था कि इस उम्र में भी मेरे उत्साह, शक्ति व सहनशक्ति में कोई कमी नहीं आयी। किन्तु अब गाँव के लोग, गाँव में नये-नये आये नागराज के पास जाते और उससे सहायता माँगते थे।

सुशील को इससे दुख हुआ। उसने अपना दुख अपनी पत्नी सूर्या को बताया तो उसने अपने पति से कहा "गाँव के लोग आपकी बहुत इज़्ज़त करते हैं। आप बूढ़े होते जा रहे हैं। आपको तक़लीफ़ पहुँचाना नहीं चाहते। इसीलिए युवक नागराज से अपनी ज़रूरतों को पूरी कर रहे हैं। इससे आप दुखी क्यों हो ?"

इसपर सुशील थोडा नाराज़ हुआ और बोला "क़ाबिलियत का उम्र से क्या वास्ता ? नागराज जवान हो सकता है, पर कोई ऐसा काम नहीं, जो मुझसे नहीं हो सकता हो। अलावा इसके, जो काम अब वह कर रहा है, मेरी तरह कर नहीं पा रहा है। मेरे और उसके काम की तुलना ही नहीं हो सकती। यह गाँव के लोग भी बख़ूबी जानते हैं।"

सूर्या तब तो चुप रह गयी, लेकिन बाद पति की कही बातें उसने कुछ लोगों से बतायीं। तब उन्होंने कहा "ताज्जुब है, सुशील तो पहले ऐसी बातों पर ध्यान ही नहीं देता था। तब भी हम सारे काम केवल उन्ही को सौंपते नहीं थे। कुछ और लोगों को भी सौंपते थे। वे तो कहा करते थे कि ज़रूरत पड़े तो मेरी सहायता माँगने आयेंगे। वे भी कभी भी इस बात पर परेशान

**आशा कश्यप**

नहीं होते थे कि मेरे पास लोग क्यों नहीं आ रहे हैं, पूरे के पूरे काम मुझे ही क्यों सौंप नहीं रहे हैं। उम्र भी तो बढ़ती जा रही है, इसीलिए शायद ऐसा सोचने से बाध्य हो गये।''

सुशील ने जब जाना कि लोग क्या कह रहे हैं, तो उसे बहुत दुख हुआ। वह चाहता था कि लोग जान जाएँ कि अब भी वह चुस्त है, बुढ़ापा उससे मीलों दूर है। आखिर यह साबित करने का एक मौक़ा भी उसके हाथ आया।

उस दिन सुशील ग्रामाधिकारी के घर के चबूतरे पर बैठकर कुछ लोगों से बातें कर रहा था। उस समय नागराज भी वहाँ था। तब वहाँ पड़ोस के गाँव के जमींदार के खज़ाने का एक अधिकारी आया। उसको देखते ही ग्रामाधिकारी ने प्रणाम किया और पूछा ''आपका यहाँ आना कैसे हुआ?'' उसने उसे अपने बग़ल में ही बिठाया।

अधिकारी ने वहाँ मौजूद सब लोगों को सरसरी नज़र से देखा और ग्रामाधिकारी से कहा ''इधर चार-पाँच महीनों से मैंने अपने ज़मींदार के गाँवों की आबादी, गाँव की सरहदों, वहाँ के तालाबों व नालों की हालत का लेखा-जोखा किया है। हाल ही में ज़मींदार शहर गये हुए हैं। वे कल वापस लौटनेवाले हैं। जिन-जिन विषयों पर मैंने प्रकाश डाला है, वह बड़ा ग्रंथ बन गया है। लगभग तीन सौ पृष्ठों का होगा। इस संबंध में आपके सहायतार्थ आपके पास आया हूँ।''

ग्रामाधिकारी आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला ''हमसे सहायता माँगने आये हैं? बोलिये, हम क्या कर सकते हैं?''

''मैंने सुना है कि आपके गाँव में सुशिक्षित लोग हैं। मैंने जिन-जिन विषयों का संग्रह किया है, उनमें तरह-तरह की त्रुटियाँ होंगी। मैं स्वयं उन्हें सुधारूँ, इससे अच्छा यही होगा कि कोई पढ़ा-लिखा आदमी इन्हें ठीक करे। इसके लिए मुझे किसी पढ़े-लिखे की सहायता चाहिये।''

''हमारे गाँव में बहुत ही कम ऐसे होंगे, जो आपके हिसाब की जाँच कर सकें, उन्हें समझ सकें और सुधार सकें। शायद इसके लिए लायक सिर्फ नागराज है। नागराज, इनकी सहायता करो ना। कभी ज़मींदार से कोई ज़रूरत आ जाए, तो ये तुम्हारी सहायता करेंगे।''

ग्रामाधिकारी ने कहा । ग्रामाधिकारी ने उसे भुला दिया, इसपर सुशील को दुख हुआ। इसके पहले उसने ऐसे बहुत-से काम किये । किन्तु वर्तमान स्थिति में उसे भुलाया जा रहा है, उसकी सहायता माँगी नहीं जा रही है ।

नागराज ने कहा "इनसे संग्रहींत विषयों का अध्ययन करने और त्रुटियों को सुधारने में कम से कम दस दिन लगेंगे । क्योंकि यह तीन सौ पृष्ठों का है । इतने बड़े काम को एक दिन में मैं नहीं कर सकूँगा ।"

उसकी बातों से अधिकारी निराश हुआ । तब सुशील ने कहा "आपको एतराज ना हो, तो मैं यह काम करूँगा"।

अधिकारी ने उसे पुस्तक देते हुए कहा "मैं आपके बारे में सुन चुका । अवश्य ही इस काम को करने की योग्यता आप में है । पर इसलिए हिचकिचा रहा था कि आप उम्र में बड़े हैं । आप यह काम कर सकेंगे तो मुझे बड़ी खुशी होगी ।"

सुशील ने बड़ी ही सहनशक्ति से उस पुस्तक की त्रुटियों को सुधारा और एक ही दिन में अधिकारी को वापस दे दी ।

दूसरे दिन अधिकारी ने वह पुस्तक ज़मींदार को दी । ज़मींदार ने उस पुस्तक को ग़ौर से पढ़ा और यह कहकर अधिकारी की प्रशंसा भी की कि कहीं भी ग़लतियाँ नहीं हैं । यह बात ज़मींदार ने दो-चार लोगों से कही भी ।

"एक दिन, एक ही दिन में पूरी पुस्तक पढ़ गया । ग़लतियों को सुथारा । किन्तु थोड़ी भी थकावट महसूस नहीं हुई" यों सुशील गाँव के

बहुत-से लोगों से बताता रहा।

इसके बाद अपनी क़ाबिलियत साबित करने के तीन चार मौक़े सुशील के हाथ लगे।

एक बार ग्रामाधिकारी बीमार पड़ गया। वैद्य के लिए नयी तरह की जडी-बूटियों की ज़रूरत आ पड़ी। वे वरुणनगर के व्यासानंद के सिवा किसी और के पास नहीं हैं। वैद्य के बताये हुए रोग के लक्षणों को उसे बताना होगा और उसकी दी हुई ज़डी-बूटियाँ लानी होंगी। किन्तु मुश्किल यह कि व्यासानंद संस्कृत में ही सुनता है और संस्कृत में ही बोलता है।

ग्रामाधिकारी ने नागराज को उसके पास भेजना चाहा। पर वरुणनगर जाना हो तो नाला पार करना पड़ेगा। इस नाले का पानी नमकीन होता है। नमकीन हवा नागराज की तबीयत पर बुरा असर ड़ालती है। फिर भी वहाँ जाना ही पड़ेगा तो उसे एक सप्ताह के पहले से ही दवाएँ खानी होंगीं। आहार पर नियंत्रण रखना होगा। लेकिन अब इतना समय भी नहीं है।

सुशील को वहाँ जाने में कोई दिक़्क़त नहीं थी। नमकीन पानी या हवा उसपर कोई बुरा असर नहीं डालते, इसलिए उसने जडी-बूटियों को ले आने का भार अपने ऊपर लिया और सफलतापूर्वक काम समाप्त करके लौटा।

गॉव के लोगों ने निश्चय किया कि इस साल काली माता की पूजाएँ बड़े पैमाने पर मनायी जाएँ। उत्सव के दिन गॉव के सब पुरुषों को काली माता की मूर्ति के सामने दिन भर नाचना होगा, कूदना होगा। खड़े ही रहने पड़ेगा, बैठना बिल्कुल नहीं चाहिये। ग्रामीणों का विश्वास था

कि ऐसा करने पर गाँव का भला होगा और ऐसा ना करने पर बुरा होगा।

उस गाँव के ही पास के जंगल में एक पेड़ है। उस पेड़ के पत्ते एक ही तरह के नहीं होते। उनमें से कुछ पत्तों के ऊपर त्रिशूल के आकार की रेखाएँ होती हैं। ऐसे एक सौ सोलह पत्तों को लाना होगा और उनकी माला बनाकर देवी के कंठ में पहनानी होगी। उत्सव समाप्त होते ही इस माला को ले जाकर उसी पेड़ में लटकाना होगा। जो पत्ते ले आता है, उसी को माला भी वापस ले जानी होगी।

जंगल की यात्रा बहुत ही कष्टप्रद है। इतनी लंबी यात्रा के बाद उत्सव में भाग लेना और भी कष्टतर है। उत्सव के समाप्त होते ही फिर से जंगल में जाना तो दुष्कर काम है। जंगल में जाकर इस पेड़ को ढूंढ निकालना और ढूँढ निकालने के बाद त्रिशूल की रेखाओंवाले एक सौ सोलह पत्तों को तोड़ना, उनकी माला बनाना सब के बस की बात नहीं।

नागराज ने कहा कि मैं यह काम कर सकूँगा, पर इतनी मेहनत मैं कर नहीं पाऊँगा। उसने कहा "उत्सव में दिन भर नाचना हो, खड़े होना हो तो हफ़्ते भर का विश्राम लेना पड़ेगा। इसके बाद भी एक हफ़्ता भर विश्राम चाहिये। अगर इतना विश्राम मुझे नहीं मिलेगा तो यह कठिन काम मुझसे संभव नहीं।"

सुशील ने यह काम इसके पहले चार-पाँच बार किया था। फिर से वह इस काम को करने के लिए सन्नद्ध हो गया। वह जंगल गया, पत्ते ले आया, दिन भर खड़ा रहा, फ़लों की माला फिर से उसी पेड़ में लटका दी। ये सारे कठोर काम उसने सक्रम रूप से पूरे किये। सबों ने कहा कि इतना कठोर परिश्रम करने के बाद भी वह थोड़ा भी थका नहीं। सूर्या भी अपने पति की सहनशक्ति व उत्साह पर खुश हुई।

इस प्रकार सुशील ने प्रमाणित किया कि कितनी ही बातों में नागराज से वह अधिक सक्षम है। फिर भी बहुत-से लोग प्रमुख कार्यों के लिए नागराज का आश्रय ले रहे थे। उसके 'ना' कहने पर ही सुशील के पास आते थे। इसी कारण सुशील के मन को ठेस पहुँचती थी।

एक दिन सूर्या ने सुशील से कहा "आराम

से घर में बैठकर आप पुराण-ग्रंथों का पठन कीजिये। उनका भावार्थ मुझे समझाइये। दोनों मिलकर सुख से रह सकते हैं। दूसरे जब आपको काम नहीं सौंप रहे हैं, आपको खुश होना चाहिये। आप अनावश्यक क्यों परेशान होते हैं?"

"सब समझते हैं कि मैं बूढ़ा हो गया हूँ। कुछ लोग तो यह सीधे मुझी से बता रहे हैं। क्या मैं खाट पर पड़े-पड़े लेट रहा हूँ। बीमार हूँ, कमज़ोर हूँ ? जो काम युवक भी कर नहीं पा रहे हैं, मैं कर रहा हूँ। करके मैंने दिखाया। इस सच्चाई को क्यों सब लोग मानने से अस्वीकार कर रहे हैं?" सुशील ने अपनी वेदना प्रकट की।

एक दिन पड़ोस के गाँव से सुपरिचित वसुदेव सुशील के घर आया। उसके गाँव में दो सालों से वर्षा हो नहीं रही है। कुएँ और तालाबों को खुदवाने पर ज़ोर दिया जा रहा है, पर ग्रामाधिकारी इस दिशा में कोई दिलचस्पी नहीं दिखा रहा है। राजा को शिकायत पेश करने में भी कई कठिनाइयाँ प्रस्तुत हो रही हैं।

जो राजधानी जायेगा, राजप्रासाद के सामने जो मैदान है, उसमें खड़े होकर जो उसे आकर्षित करनेवाला कष्टतर कार्य करेगा, उसी को राजा बुलायेगा और कारण जानेगा। तब राजा को समझाना होगा कि उसके आने का क्या कारण है और उसे क्या चाहिये।

"साधारणतया सब राजधानी के मैदान में आते हैं और मैदान के बीच बिना रुके तीन बार उलटते-पलटते है। ऐसा कर सकनेवाले हमारे गाँव में बहुत हैं। किन्तु राजा को सही तरीके से बताना भी तो चाहिये। इतनी क्षमता रखनेवाले हमारे गाँव में हैं नहीं, इसीलिए यहाँ आया हूँ। क्या ऐसा समर्थ इस गाँव में तुम्हारी पहचान का कोई है।" वसुदेव ने सुशील से पूछा।

सुशील के सामर्थ्य के बारे में वसुदेव को बखूबी मालूम था। फिर भी उसने सीधे उसकी सहायता नहीं माँगी बल्कि घुमा-फिराकर उसने बात की। इस पर सुशील बिगड़ पड़ा और उसने कहा कि ऐसे व्यक्ति के बारे में ग्रामाधिकारी से ही पूछो। वसुदेव ग्रामाधिकारी के पास गया। जब उससे मिलकर वापस आया तब उसने सुशील से कहा "ग्रामाधिकारी ने नागराज

नामक एक युवक का नाम सुझाया है। उन्होंने कहा भी कि इस काम को करने के लिए तुम्हीं नागराज को मना सकते हो।''

सुशील उसकी बातों से और नाराज़ हो उठा और बोला ''ख़जाने के अधिकारी ने तीन सौ पृष्ठों की जो पुस्तक लिखी, एक ही दिन में पूरा का पूरा पढ़ लिया और उसमें जो-जो ग़लतियाँ थीं, उन्हें सुधारा। अकस्मात् मुझे दूसरे गाँव में जाकर जडी-बूटियाँ लाने को कहा गया तो जाकर उसी दिन लौट आया। काली माँ के उत्सव पर तीन दिन लगातार परिश्रम करता रहा, किन्तु कोई बहाना किये बिना, थके बिना गाँव की इज़्ज़त बचायी। मेरी उपस्थिति को भी भुलाकर नागराज को ही ले जाना चाहते हो, ले जाओ। मैं उससे बात करने और उसे मनाने कदापि तैयार नही।'' ''तो तुम्हारे ग्रामाधिकारी ने जो कहा, सच ही था'' वसुदेव ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा।

असहनशील हो सुशील पूछ बैठा ''बोलो, ग्रामाधिकारी ने मेरे बारे में क्या कहा?''

''इसके पहले जब कभी भी कठिनतम काम करते थे, तब लोग तुम्हारी वाहवाही करते थे। तब तुम कहा करते थे कि यह कोई कठिन काम थोड़े ही है। परंतु अब जो भी काम करते हो, कहने लगते हो कि यह काम बड़ा कठिन है, फिर भी मैं कर पाया, मुझीसे यह संभव है। हाँ, ग्रामाधिकारी ने ठीक ही कहा कि तुममें बुढापे ने पदार्पण किया है। इस उम्र में तुम्हें विश्राम लेना चाहिये।'' वसुदेव ने सलाह दी।

मुश्किल काम अब भी वह कर रहा है, करता जा रहा है, किन्तु अब उन कामों में कठिनाई महसूस कर रहा है। उसे पसंद नहीं था कि लोग उँगली उठाकर दिखायें और कहें कि तुम बूढ़े हो गये हों, तुम्हारी उम्र हो गयी है। नागराज इन बातों से परेशान नहीं होता। क्योंकि वह जो काम कर सकता है, वही करने उद्यत होता है। अगर उससे वह काम नहीं हो पाता तो साफ़ कह देता है कि मुझसे यह काम नहीं होगा। शक्ति-सामर्थ्य को प्रमाणित करने की तड़प उसमें नहीं है। जिनकी उम्र बढ़ती जाती है, उन्ही में ऐसी तड़प होती है।
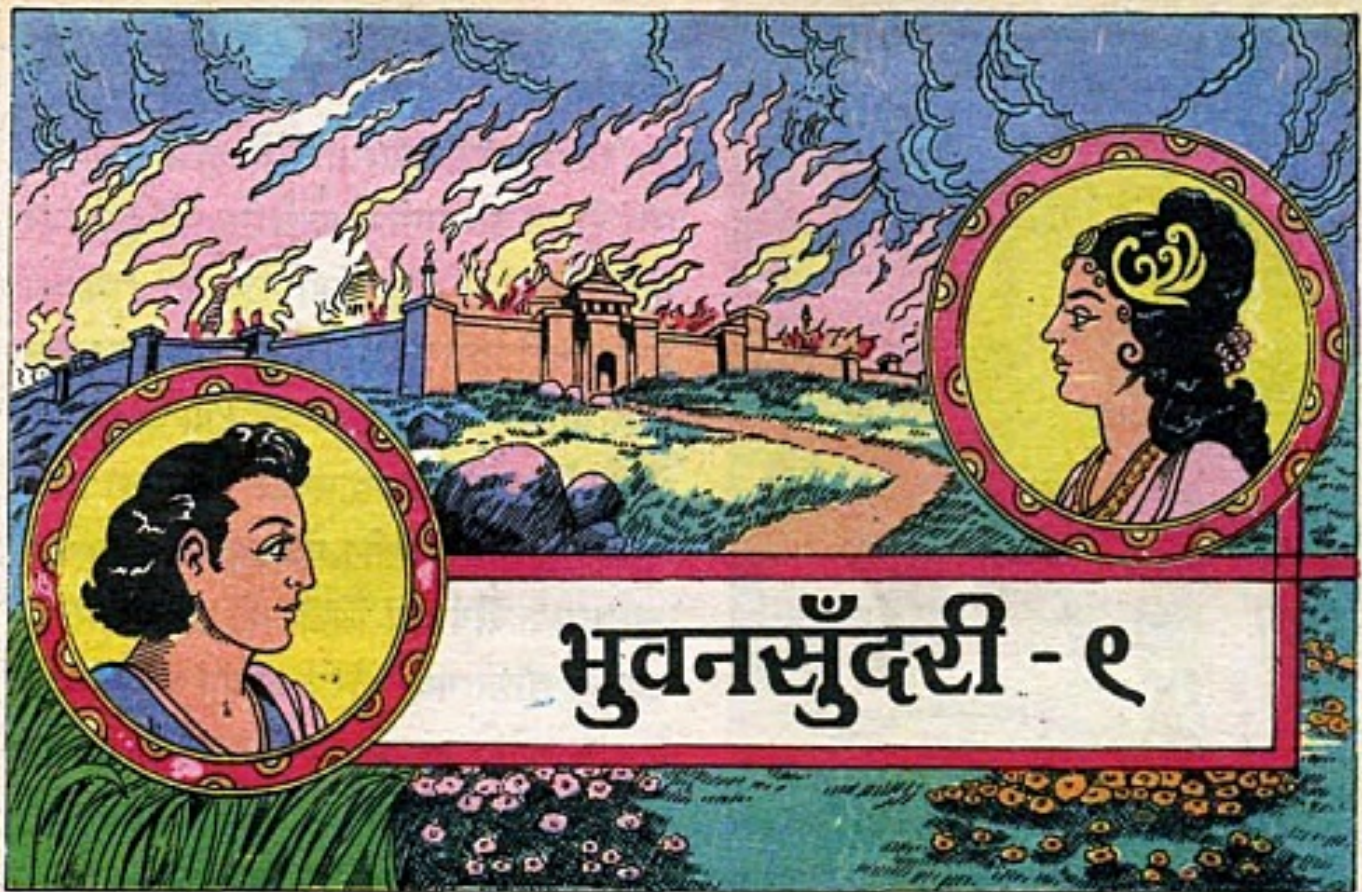
(भुवनसुँदरी को लेकर ग्रीकों और ट्रोजनों में जो युद्ध छिड़ा, वह अंतिम दशा में पहुँचा। दोनों पक्षों के बहुत-से महान योद्धा मारे गये। ट्रोय को हथियाने के लिए रूपधर ने एक योजना बनायी। उस योजना के अनुसार ग्रीक के योद्धाओं ने काठ से बने एक विराट घोड़े का निर्माण किया। उसके पेट में वे घुस गये। राराजा ने घोड़े और चौर्यनाथ नामक एक गुप्तचर को समुद्री तट पर छोड़ दिया। उन्होंने नाटक किया, मानों वे उस प्रदेश को छोड़कर ग्रीक लौट रहे हैं। ट्रोजन उस घोड़े को अपने नगर में ले आये। वे अपना विजयोत्सव बड़े ही उत्साह से मनाने लगे।)

**बा**हर कोलाहल मचा हुआ था, तो अंदर घोड़े के पेट में बैठे ग्रीक योद्धा भय से काँप रहे थे। उन्हें मालूम था कि उनकी उपस्थिति का संकेत मात्र ट्रोजनों को मिल जाए तो उनकी जान की ख़ैर नहीं। वे सब के सब तमाम कर दिये जाएँगे। दोर्धंड तो चुपचाप रो भी रहा था। केवल नवयोध मात्र शिला की तरह गंभीर बैठा हुआ ता। तीक्षणदृष्टि की फेंकी हुई बर्छी काठ के घोड़े के अंदर से होती हुई उसके सिर के बिल्कुल ही पास गिरी। फिर भी वह टस से मस ना हुआ। वह तो बाहर आकर शतृओं पर टूट पड़ने के लिए आतुर था। इस मौक़े की प्रतीक्षा में तलवार की मूठ को कसकर पकड़े हुए था और बार-बार रूपधर को देख रहा था। क्योंकि इस हमले का नेता रूपधर ही था। बाहर जाने की आज्ञा वही देने का हक़दार था। रूपधर को अच्छी तरह से मालूम था कि अगर वे इस साहसपूर्ण प्रयास में विफल हो जाएँगे, तो उनकी

से रोका।

रात हुई। विजयोत्सव की क्रीडाओं में थके-माँदे ट्रोजन के नागरिक गाढ़ी निद्रा में डूब गये। एक कुत्ता भी भूँक नहीं रहा था। केवल भुवनसुंदरी जगी हुई थी। उसके कमरे के बाहर गोल आकार का एक दीप जल रहा था। ग्रीकों के लिए आयोजित यह संकेत-चिन्ह था।

आधी रात हो गयी। चंद्रोदय होनेवाला था। उस समय चौर्यनाथ बिल्ली की तरह धीरे से नगर के बाहर गया और वज्रकाय की समाधि के पास ज्योति जलायी। उसी समय प्रत्याम्नाय भी एक जली मशाल हिलाता रहा, जो समुद्र में प्रतीक्षा में बैठे रारजा के लिए संकेत था।

रारजा की नौकाओं के दीप भी जले। ग्रीक नौकाएं समुद्र तट की तरफ़ बढ़ीं।

रारजा का संकेत प्राप्त होते ही प्रत्याम्नाय काठ के घोड़े के पास गया और मंद स्वर में कहा "सब कुछ तैयार है।" तक्षण ही रूपधर ने दोर्घंड को आज्ञा दी कि घोड़े का दरवाज़ा खोल दिया जाए।

घोड़े की ठठरी का दरवाज़ा खुला। एक योद्धा तो आतुर हो बाहर कूद पड़ा और वहीं का वहीं ढ़ेर हो गया। अब रस्सी की सीढ़ी बाहर फेंकी गयी। ग्रीक योद्धा एक-एक करके चुपके से नीचे उतरे। कुछ योद्धा नौकाओं से उतरकर आनेवाले सैनिकों के प्रवेश के लिए दरवाज़ा खोलने सिंहद्वार की तरफ़ दौड़े। कुछ योद्धा राजप्रासाद की तरफ़ दौड़े-दौड़े गये और नींद

मृत्यु निश्चित है। ट्रोय को कब्जे में ले पाना असंभव है। वह एक सपना मात्र बनकर रह जायेगा। अतः वह बड़ी जागरूकता बरत रहा था, फूँक-फूँककर क़दम बढ़ा रहा था।

भुवनसुंदरी शाम को अपने पति अरिभयंकर के साथ इस घोड़े को देखने आयी। पति के मन को बहलाने के अंदाज़ में वह घोड़े के चारों ओर घूमती रही। बीच-बीच में उसे खटखटाती रही। घोड़े के अंदर जो योद्धा बैठे हुए थे, उनकी पत्नियों की आवाज़ों की नक़ल उतारती रही। उनका नाम ले-लेकर उन्हें वह बुलाती भी रही। रूपधर के बग़ल में ही बैठे प्रताप और देवमय, तक्षण ही बाहर कूदना चाहते भी थे। किन्तु अच्छा हुआ कि रूपधर ने उन्हें ऐसा करने

में मस्त वहां के प्रहरियों को मार डाला।

प्रताप अब केवल अपनी पत्नी भुवनसुंदरी के बारे में सोच रहा था। उसका ध्यान उसी ओर केंद्रित था। वह भुवनसुँदरी के महल की तरफ़ बेतहाशा दौड़ा।

इसके बाद मार-काट शुरू हुई। खिली चाँदनी में ग्रीक वीरों ने अंधाधुँध नागरिकों की हत्यायें की। यद्यपि रूपधर, भुवनसुँदरी और उसकी सास को वचन दे चुका था कि अस्त्रहीनों का कुछ नहीं बिगाड़ेंगे, फिर भी ग्रीकों ने इस वचन को नहीं निभाया। वे हर घर के अंदर घुसकर स्त्रीयों और बूढ़ों तक के गले काटते रहे।

वर्धन, उसकी पत्नी और बेटियाँ एक मंदिर में जाकर छिप गये। वर्धन बाहर आकर ग्रीकों का सामना करना चाहता था, किन्तु उसकी पत्नी ने उसे रोका और कहा "तुम वृद्ध हो। उनसे भिड़ने की शक्ति तुममें नहीं है। अच्छा यही है कि यहीं छिपकर हम अपनी जान बचाएँ। यही बहुत है।"

वर्धन ने पत्नी की बातें मान लीं। पर इतने में, ग्रीक उसके एक बेटे का पीछा करते हुए आये और देखते-देखते नवयोध ने तलवार उसकी पेट में भोंक दी और वह वहीं ढ़ेर हो गया। वर्धन से यह दृश्य देखा नहीं गया। कोई भी पिता अपनी ही आँखों के सामने बेटे को शत्रुओं के हाथों मरते हुए कैसे देख पायेगा, सह पायेगा ? वह आवेश-पूरित होकर बाहर आ गया और यों ग्रीकों का वह क़ैदी बन गया। ग्रीक
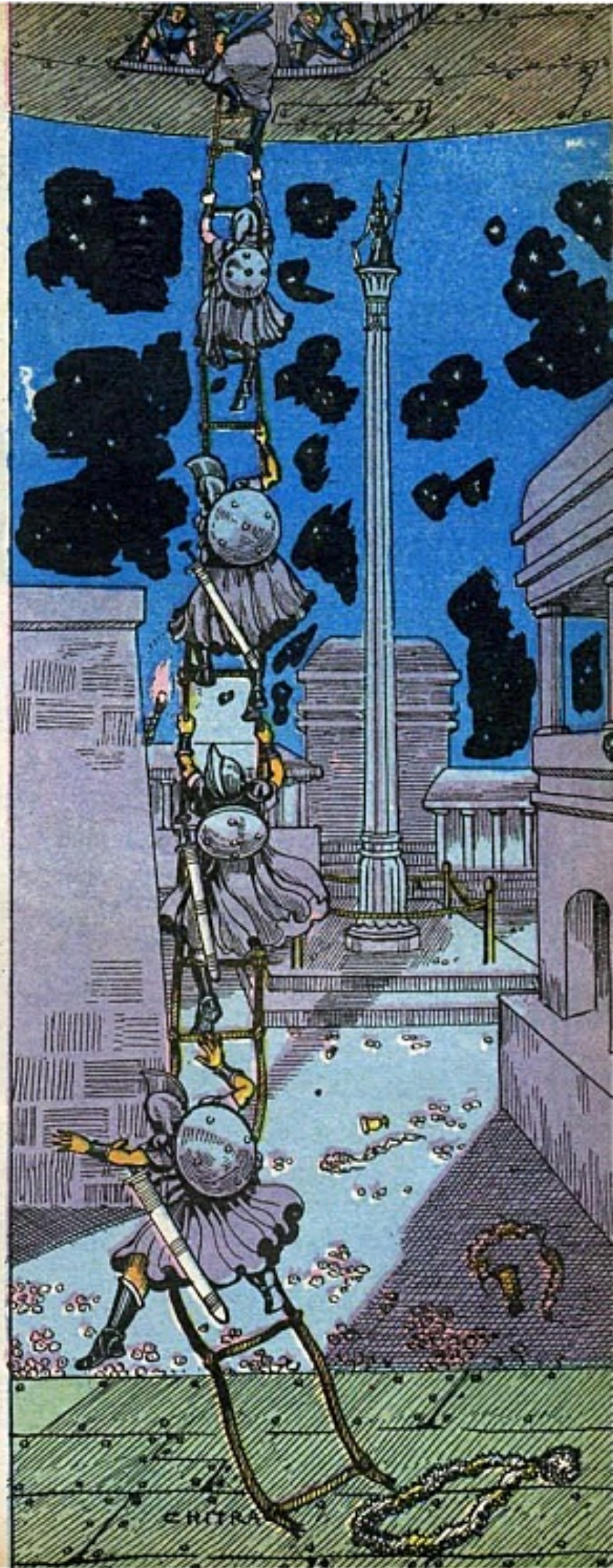
उसे राजभवन तक खींचकर ले गये और बड़ी निर्दयता से उसे मार डाला।

प्रताप के साथ-साथ रूपधर भी भुवनसुँदरी के घर गया। दोनों ने मिलकर बड़ी देर तक अरिभयंकर से लड़ाई की। आख़िर भुवनसुँदरी ने ही अरिभयंकर की पीठ में छुरी भोंकी और उसे मार डाला।

अब तक तो प्रताप यही सोच रहा था कि भुवनसुँदरी जैसे ही हाथ लगेगी, मार डालूँगा, उसकी कृतघ्नता का प्रतिशोध लूँगा। किन्तु उसकी मनमोहक छवि को देखते ही उसने अपना विचार बदल लिया। उसने तलवार फेंक दी और भुवनसुँदरी का हाथ पकड़कर उसे अपनी नौकाओं के पास ले गया।

ट्रोजन होते हुए भी प्रत्यम्नाय ने ग्रीकों का साथ दिया। इस बात को भुलाकर ग्रीक सैनिकों ने उसके एक बेटे को घायल किया। उसके दूसरे बेटे को मारने के लिए सड़कों पर उसका पीछा करने लगे। ठीक वक़्त पर रूपधर ने अपने सैनिकों को ऐसा करने से रोका। और प्रत्याम्नाय के घर के दरवाजे पर एक बाघ का चर्म भी लटकवाया। यह इस बात की पहचान है कि इस घर के किसी भी शख़्स पर अत्याचार नहीं हों। इसी प्रकार प्रशंसन का घर भी ग्रीकों के आक्रमणों से बच गया। क्योंकि वह भी उन ट्रोजनों में से था, जो इस युद्ध में ग्रीकों को सहायता पहुँचा रहे हैं।

ट्रोय में जैसे ही ग्रीकों का हत्याकांड शुरू हुआ, वर्धन की बड़ी बेटी जालिनी बुद्धिमति मंदिर में जाकर छिप गयी। किन्तु ग्रीकों ने उसे पकड़ लिया और अपने साथ ले गये। जो ट्रोजन स्त्रीयाँ बच गयीं, वे ग्रीक सैनिकों के अधीन हो गयीं। राराजा ने जालिनी को अपना बना लिया।

हत्याकांड की समाप्ति के बाद ग्रीकों ने ट्रोय नगर को लूटा। दीवारें तोड़ दीं, घरों को जला दिया। बलियाँ चढ़ायीं। जो-जो लूटा, आपस में बाँट लिया।

वीरसिंह की पत्नी को नवयोध ने अपना लिया। उसका एक शिशु भी था, जिसे ग्रीकों ने षड़यंत्र रचकर रहस्यपूर्वक मार डाला।

वज्रकाय की प्रेयसी प्रमोदिनी के भविष्य

राराजा ने प्रमोदिनी की बलि का विरोध किया। उसने कहा "बहुत ही रक्तपात हो चुका है। अलावा इसके, मरे हुए आदमी के अधिकारों का संबंध जीवित एक स्त्री से जोड़ना अनुचित भी है। मुझे तो बिल्कुल असंगत लगता है।"

"तुम्हारे हिस्से में जालिनी आयी है। उसे तृप्त करने के लिए उसकी बहन की जान बचाने की कोशिश में लगे हो।" यों कुछ ग्रीकों ने राराजा पर खुलेआम आरोप भी लगाया। वाद-विवाद ने तीव्र रूप धारण किया। लग रहा था कि बात बहुत बढ़ जायेगी तो रूपधर ने हस्तक्षेप करते हुए अपना निर्णय सुनाया कि प्रमोदिनी की बलि चढ़ायी जाए। ऐसा करने पर ही वज्रकाय की आत्मा तृप्त होगी। राराजा से उसने आग्रह भी किया कि दूसरों की इच्छा के अनुसार ही कार्रवाई हो।

को लेकर ग्रीकों के बीच बहुत से वाद-विवाद हुए, दीर्घ चर्चाएँ हुईं। वज्रकाय ने मरते समय अपने मित्रों से कहा था कि ट्रोय के पतन के बाद प्रमोदिनी की बलि मेरी समाधि पर चढ़ाना। हाल ही में वह अपने बेटे तथा कुछ और ग्रीकों के सपनों में आया और अपनी बात दुहरायी। उसने यह कहकर धमकाया भी कि "प्रमोदिनी की बलि दी ना जाए तो ग्रीक सेना स्वदेश सुरक्षित लौट नहीं पायेगी। मैं खुद रुकावट बनकर खडा हो जाऊँगा और ग्रीक सेनाओं का ध्वंस करूँगा।"

कांशुक ने कहा "वज्रकाय ने प्रमोदिनी को तन-मन चाहा। किन्तु उसने धोखा दिया और उसे मरवा डाला। ऐसी स्थिति में वज्रकाय की इच्छा पूरी ना करना अधर्म होगा।" किन्तु

प्रमोदिनी की बलि का निर्णय हो गया। उसे ले आने का काम रूपधर को सौंपा गया। वज्रकाय का पुत्र नवयोध स्वयं बलिकर्ता बनकर खड़ा हो गया। ग्रीक सैनिकों की उपस्थिति में, वज्रकाय की समाधि के पास प्रमोदिनी की बलि चढ़ायी गयी। ग्रीकों ने शास्त्रोक्त उसकी अत्यंक्रियाएँ कीं।

प्रमोदिनी के मरते ही ग्रीकों की वापसी यात्रा के अनुकूल हवाएँ चलीं। ग्रीकों ने समझा कि प्रमोदिनी की बलि से वज्रकाय की आत्मा शांत हुई और उसी ने अनुकूल वायु भेजकर ग्रीकों को सहायता पहुँचायी। विलंब किये बिना

वे जहाज़ों में निकल पड़े।

वर्धन की पत्नी रूपधर के हिस्से में आयी। किन्तु ग्रीकों की अनीति तथा अत्याचारों पर क्रोधित वह रूपधर तथा अन्य ग्रीकों को गालियाँ देने लगी, उन्हें शाप देने लगी। जो मुँह में आया, बकने लगी। उसका मुँह बंद करने में असफल ग्रीकों ने उस मारकर समुद्र में फेंक दिया।

इस वापसी यात्रा में ग्रीक प्रमुख छिन्नाभिन्न हो गये। इनमें से कुछ प्रमुख अपने राज्य तक पहुँच भी नहीं पाये।

ट्रोय से निकलने के पहले राराजा और उसके भाई प्रताप के बीच झगड़ा हुआ। प्रताप ने कहा "वायु हमारे अनुकूल है। तक्षण ही यात्रा की तैयारियाँ कीजिये।" राराजा ने कहा "बुद्धिमती देवी को भेंटे समर्पित किये बिना जाना क्या उचित है?" प्रताप ने कहा, "बुद्धिमती देवी ने हमारी ऐसी क्या सहायता कर दी, जिसके लिए हमें उसे भेटें देनी या बलियाँ चढ़ानी हैं? उसने तो शत्रु-पक्ष का ही साथ दिया।" इस बात को लेकर जो वाद-विवाद हुए, उससे दोनों एक-दूसरे से नाराज़ होकर अलग हो गये। वे ज़िन्दगी में फिर कभी एक-दूसरे से नहीं मिले।

राराजा, नवयोध, वृद्ध नवद्योत सीधे घर चले गये। वायु-मंडल ने साथ नहीं दिया, इसलिए प्रताप के बहुत - से जहाज़ डूब गये या टूट गये। वह ईजप्ट पहुँच पाया। वहाँ से घर पहुँचते-पहुँचते उसके भाई राराजा की हत्या किसी ने कर दी।

ट्रोय युद्ध की अंतिम दशा में काठ के घोड़े की योजना बनाकर सफलता प्राप्त करने का पूरा श्रेय रूपधर को ही है। ट्रोय को पराजित करने में उसका प्रमुख पात्र है। ऐसे रूपधर को घर पहुँचने में दस साल लगे। उसकी यात्रा बड़ी ही विचित्र रही।

यों ट्रोयनगर का पतन हुआ। ग्रीकों से ध्वंस किये जाने के पहले वह संसार के अतिसुंदर नगरों में से एक था। नाश के बाद कितने ही राजाओं और प्रशंसन की संतान ने उसका पुनर्निर्माण किया किन्तु वह अपने पूर्व वैभव को प्राप्त नहीं कर सका।

**(समाप्त)**

## 'चन्दामामा' की ख़बरें

### साइकिल की यात्रा-चौदह साल

तहेर मद्रासवाला अहमदाबाद का निवासी है। १९८१ में उसके माँ-बाप ने छह महीनों तक साइकिल पर यात्रा करने की अनुमति दी। तब उसकी उम्र थी अठारह साल। छे महीनों की यात्रा के बाद भी वह घर वापस नहीं आया। चौदह सौ साल तक यात्रा ज़ारी रखी। ११६.००० कि.मी की यात्रा उसने साइकिल पर ही की। इस दौरान तीस देशों में वह यात्रा करता रहा। उसने केवल साइकिल पर यात्रा ही नहीं की बल्कि इस अवधि में उस-उस देश की विशिष्टताओं को जाना और उनका संग्रह किया। फोटो भी निकाले। जिस-जिस देश में वह गया और वहाँ जिन-जिन लोगों से मिला, इसका एक वीडियो भी निकाला। इस वीडियो चित्र में पूरे विवरण उपलब्ध हैं। अगर वह अपने अनुभवों को बताना चाहे तो यह अवश्य ही उपयोगी व रुचिकर पुस्तक बन सकती है।

### चाँदी का बाइबिल

स्टाकहोम के उप्पाला विश्वविद्यालय की संपत्ति बाइबिल ग्रंथ के दो पन्ने और ऊपर की दफ़्ती गत अप्रैल पाँचवीं तारीख़ से दिखाई नहीं पड़े। एक महीने के बाद किसी ने टेलिफोन किया कि वे पन्ने स्टाक होम के प्रधान रेल्वेस्टेशन के लाकर्स में सुरक्षित हैं। बाइबिल के वे पन्ने सुप्रसिद्ध चाँदी के बाइबिल में से हैं। छठवीं शताब्दी के इस पवित्र ग्रंथ के अक्षर चाँदी की स्याही से लिखे हुए हैं। कुछ अक्षरों तथा पन्नों के कोनों में सोने का उपयोग हुआ है। कहा जाता है कि सत्रहवीं शताब्दी में स्वीडन के सैनिक उस ग्रंथ को प्राग (जंकोस्लोवाकिया) से चुराकर ले आये थे। गोथिक भाषा में लिखा हुआ यह अद्‌भुत ग्रंथ तब से स्वीडन में ही है।

### चार वर्ष के बालक का साहस

मई १९ को सन्नी कनोडिया ने बंबई की गलियों में कार चलायी। इसके पहले भी मई सात को कलकत्ता में उसने कार चलायी थी। इससे भी पहले, अहमदाबाद, नोगान, गोहाटी, सूरत आदि नगरों की सड़कों पर उसने कार चलायी और लोगों को आश्चर्य में डुबो दिया। कनोडिया अब भी नर्सरी क्लास में ही पढ़ रहा है। वह चार साल की उम्र का है। हैदराबाद के चार साल की उम्र के जुही अग्रवाल ने भी कार चलायी थी। जब उसके माता पिता ने उसे यह बताया तो उसने कहा "क्या यह मुझसे नहीं हो सकता?" उसने जिद करके अपने पिता से यह विद्या सीखी और अनेकों नगरों में कार चलाकर एक नया रिकार्ड स्थापित किया। उसका नाम गिन्नीस बुक में दर्ज होनेवाला है।

# योग्य अभिलाषा

**वि**क्रमार्क हठी था। धुन का पक्का था। वह पुनः पेड़ के पास गया और शव को उतारा। अपने कंधे पर डाल लिया और श्मशान की ओर त्वरित गति से जाने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, तुम्हारी कठोर दीक्षा व निष्ठा का अभिनंदन हृदयपूर्वक करता हूँ। यहाँ विषसर्प हैं, सियार हैं, चमगीदड़ हैं, मालूम नहीं, और क्या-क्या दुष्ट शक्तियाँ हैं। सोचने मात्र से शरीर भय से काँप उठता है। किन्तु तुम्हें भय छू तक नहीं पा रहा है। साहस, वीरता, आग्रह, कठोर परिश्रम तुम्हारे निजी सद्गुण हैं। इनके सहारे तुम अपने कार्य में किसी प्रकार की ढिलाई दिखा नहीं रहे हो। अगर तुम यह कठोर परिश्रम किसी तांत्रिक से मिलने और उससे सहायता पाने के उद्देश्य से कर रहे हो तो अवश्य ही अंत में तुम्हें निराश होना पड़ेगा। अपने परिश्रम को असफल पाकर निरुत्साहित

बैताल कथा

होना पड़ेगा। क्योंकि ऐसे तांत्रिक अद्भुत तथा अतींद्रिय शक्तियों को पाने के प्रयत्न में, सामान्य मानवों के जीवन के उतार-चढ़ाव, उनकी दुराशाएँ तथा भय को समझने में अशक्त होते हैं। वे उनकी तह तक पहुँच नहीं पाते। साधी हुई उनकी अपूर्व शक्तियाँ अकारण ही अपात्रों के हाथ लगती हैं। इसलिए तुम्हें मेरी सलाह है कि तुम ऐसे प्रयत्न में रत हो तो उसे छोड़ दो। तुम्हें जागरूक करने मतंग नामक एक मुनि की कहानी सुनाऊँगा। यह मैं तेरी भलाई के लिए ही कह रहा हूँ। अपनी थकावट दूर करते हुए सुनते जाओ।'' फिर बेताल मतंग की कहानी सुनाने लगा।

बहुत पहले पूर्वी दक्षिणी तट पर एक गाँव में एक सुसंपन्न व्यक्ति रहता था। इसका नाम था नवनीत। कालक्रम में उसकी सारी संपत्ति छिन गयी। बेटे सीताराम के इक्कीस वर्ष होते-होते केवल घर मात्र शेष रह गया। वह अपनी दुस्थिति पर बहुत ही शोकग्रस्त हुआ। खाट पर पड़े-पड़े उसने अपने पुत्र को अपने पास बुलाया और उससे कहा ''सीताराम, मेरी दुराशा के कारण ही यह सब कुछ हुआ है। हम इस दुस्थिति पर पहुँच गये हैं। किन्तु तुम्हारे जीवन में ऐसा होना नहीं चाहिये। तुम इक्कीस साल के हो गये। आज मैं रथसप्तमी के दिन तुम्हें ऐसा उपाय बताना चाहता हूँ, जिससे तुम सुखी रह पाओगे। तुम नहाकर स्वच्छ मेरे पास आओ।''

सीताराम जब नहाने जा रहा था तब उसकी माँ, रजनी ने उससे कहा ''मैं तुमसे बताना भूल गयी। आज रथसप्तमी का दिन है। नहाते समय आक के पत्तों व बेर के फलों को सिर पर रखकर नहाना चाहिये।''

आक के पत्ते सीताराम को आसानी से मिले नहीं। इन्हें पाने उसे बहुत घूमना पड़ा, इसलिए नहाने में देर हो गयी। इस बीच नवनीत की मृत्यु हो गयी। रजनी और सीताराम उसकी मृत्यु पर बहुत रोये।

दूसरे ही दिन ऋणदाताओं ने उसके घर पर हमला बोल दिया। उनका कहना था कि

नवनीत ने उन्हें आश्वासन दिया था कि रथसप्तमी के दूसरे ही दिन उसका बेटा कर्ज़ चुका देगा।

सीताराम ने उनसे कहा कि उसके पिता उसे कोई उपाय बतानेवाले थे, लेकिन बताने के पहले ही वे मर गये। किन्तु ऋणदाताओं ने उसकी एक ना सुनी।

ऋणदाताओं में रमण नामक एक व्यक्ति था। नवनीत ने उसी के पास अपना घर गिरवी पर रखा था। उसने दूसरों से कहा "तुम्हें जो रक़म मिलनी चाहिये, वे छोटी-छोटी रक़में हैं। मैं इस घर को सामग्री सहित स्वाधीन करूँगा। मैं तुम लोगों का कर्ज़ चुका दूँगा। क्या तुम्हें स्वीकार है?"

सबने इस प्रबंध को माना। तब रमण ने सीताराम से कहा "मैं तुम्हें एक दिन की मोहलत दे रहा हूँ। तुम्हें और तुम्हारी माता को कल सबेरे ही घर छोड़कर चले जाना होगा। यहाँ की कोई भी वस्तु अपने साथ नहीं ले जाओगे। ठीक इसी समय पर कल मैं यहाँ आऊँगा।" सीताराम को धमकी देकर वह और बाक़ी लोग वहाँ से चले गये।

रजनी पास ही खड़ी यह सब कुछ सुन रही थी। उनके चले जाने के बाद उसने अपने बेटे से कहा "हम पर आफ़त आ पड़ी है। हमारे दिन बुरे हैं। बेटे, घर के टॉड पर तुम्हारे पुरखों के समय की लकड़ी से बनी एक पुरानी पेटी है। बस, उस पेटी मात्र को हम ले जायेंगे। उसे लेकर यहाँ से जायेंगे।"

सीताराम टॉड पर चढ़ा। वहाँ तरह-तरह की पुरानी चीज़ें बिखरी पड़ी थीं। एक कोने में उसे वह मिली। उसने उसे खोलकर देखा कि आख़िर उसमें है क्या। एक छोटी क़िताब के अलावा उसे और कुछ दिखाई नहीं पड़ा।

सीताराम ने उस पुस्तक को खोलकर देखा। बहुत ही कम पृष्ठों की उस पुस्तक में उसके वंश का इतिहास था। सीताराम के जन्म तक के पूरे विवरण उसमें लिखित थे। उसके बाद के एक पन्ने में लिखा हुआ था "बादरायण, बादरायण, बादरायण नाम के मंत्र को तीन बार जपने से सम्मुख खड़े शत्रु भी मित्र बन जायेंगे और जी भर के हमारी

सहायता करेंगे । यह इस परिवार की प्रत्येकता है ।''

इसके अलावा इस पुस्तक में कुछ और लिखा हुआ नहीं था, किन्तु चेतावनी दी गयी थी कि बादरायण मंत्र के बारे में मृत्यु के पूर्व तक किसी को बताना नहीं चाहिये । अब सीताराम जान गया कि मरने के पहले उसके पिता उसे क्या बताना चाह रहे थे । वह टाँड से उतरा और बड़े उत्साह से रमण के घर गया । उसके पास जाने के बाद मन ही मन तीन बार उसने मंत्रोच्चारण किया ।

रमण उससे बड़े प्यार से मिला और कहा ''तुम्हारा पिता बहुत ही अच्छा व्यक्ति था। अकारण ही तुम्हें बहुत ही मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है । बोलो, तुम्हें क्या चाहिये ? मैं तुम्हारी भरसक सहायता करूँगा ।''

''मेरे कर्ज़ चुकाओ । मुझे इन कर्ज़ों के कष्टों से उबारो'' सीताराम ने कहा ।

''भगवान की कृपा से मेरे पास बहुत कुछ है । इसलिए तुम्हें मेरा कर्ज़ चुकाने की ज़रूरत नहीं । तुम्हारा छोटे-मोटे कर्ज़ भी चुका दूँगा । निश्चिंत जाओ और आराम से रहो''रमण ने कहा । उसने अपना वचन निभाया भी ।

अब उनका घर सुरक्षित है, उनसे छिन नहीं गया । कर्ज़ के कष्टों से मुक्ति मिल गयी । सीताराम दुकानदार मदन के पास गया और बादरायण मंत्र का जप किया । फलस्वरूप मदन ने वचन दिया कि आवश्यक सामग्री मुफ़्त में भेजा करूँगा ।

यों कुछ दिन बीत गये । एक दिन रात को सीताराम के घर में चोर घुस आया । चोर ने छुरी दिखाकर उन्हें डराया । सीताराम ने मन ही मन बादरायण मंत्र जपा ।

तब तक्षण ही चोर ने कहा ''मेरा अपना कोई भी नहीं है । आज ही से चोरी करना छोड़ दूँगा और कोई काम करके अपनी ज़िन्दगी गुज़ारूँगा ।'' यह कहकर चोर चला गया । ''सब कुछ विचित्र लग रहा है । मेरी समझ में आ नहीं रहा है कि सब लोग क्यों हमारी सहायता करने तैयार हो जाते हैं ?

क्या तुमने कोई वशीकरण मंत्र पाया है ?" माँ ने बेटे से पूछा।

"नहीं माँ, ऐसा कोई मंत्र मेरे पास नहीं है। मुझे लगता है कि दिवंगत पिता की आत्मा हमारी सहायता कर रही है" सीताराम ने अपनी माँ को समझाया-बुझाया।

एक दिन मतंग नामक एक तांत्रिक उस गाँव में आया। वह बहुत ही महिमावान था। गाँव के कितने ही लोगों के रोगों की चिकित्सा उसने की। कुछ लोगों को वर भी प्रसादा। गाँव के लोग कहने लगे कि तांत्रिक के लिए सब कुछ साध्य है, कोई ऐसा काम नहीं, जो उसके लिए असाध्य हो।

सीताराम को तांत्रिक की महिमाओं के बारे में मालूम हुआ। उसे लगा कि अगर मैं बादरायण मंत्र को जपकर उस तांत्रिक को अपने स्वाधीन कर लूँगा तो इस संसार में कोई ऐसा कार्य नहीं होगा जो मेरे लिए साध्य ना हो। इसलिए एक दिन वह उस मुनि से मिला और बादरायण मंत्र जपा।

मतंग ने उसकी ओर प्रसन्नता भरी आँखों से देखा और पूछा "तुम तो भाग्यवान हो। तुम्हें मेरी सहायता की क्या आवश्यकता है ?"

"स्वामी, कितने ही साधारण लोग मेरी सहायता कर रहे है, मेरी ज़रूरतों को पूरा कर रहे हैं। इसलिए मेरी साधारण इच्छाएँ पूरी हो रही हैं। आप जैसे महानुभाव मेरी सहायता करेंगे तो मेरी असाधारण इच्छाओं की भी पूर्ति होगी "हाथ जोडकर बड़े विनय से सीताराम ने कहा।

मतंग ने हँसते हुए कहा "मेरी कहानी भी सुनो पुत्र।" वह अपनी कहानी यों कहने लगा।

"मैं इस विश्व का चक्रवर्ती बनना चाहता था। हिमालय पर्वतों में जाकर मैंने घोर तपस्या की। कुछ समय के बाद भगवान प्रत्यक्ष हुए। मैंने अपनी इच्छा व्यक्त की।"

"वर्तमान चक्रवर्ती बहुत ही अच्छा चक्रवर्ती है। वह इस पद के योग्य है। तुम्हारा वह पद चाहना न्याय-संगत नहीं" भगवान ने कहा।

सम्राट बनूँगा'' मैंने अपना तर्क प्रस्तुत किया।

''मनुष्य को चाहिये कि अपनी शक्तियों को अपनी आवश्यकतों की पूर्ति के लिए ही उपयोग में ना लावें। आवश्यक्ताओं की सीमाओं को लाँघकर दुराशा के गर्त में वह गिर जाए तो किसी न किसी दिन उसे एक का दस गुना चुकाना पड़ेगा। कोई हमारे काम आया तो उसके काम हमें भी आना चाहिये। ऐसा ना करने पर जो पाया गया, उससे दस गुना हमें अधिक देना पडेगा। हमें खोना पड़ेगा। तपस्या स्वार्थ के लिए नहीं की जाती बल्कि भगवान तक पहुँचने के लिए की जाती है। तुम इस तथ्य को भुलाना मत'' भगवान ने मुझे उपदेश दिया।
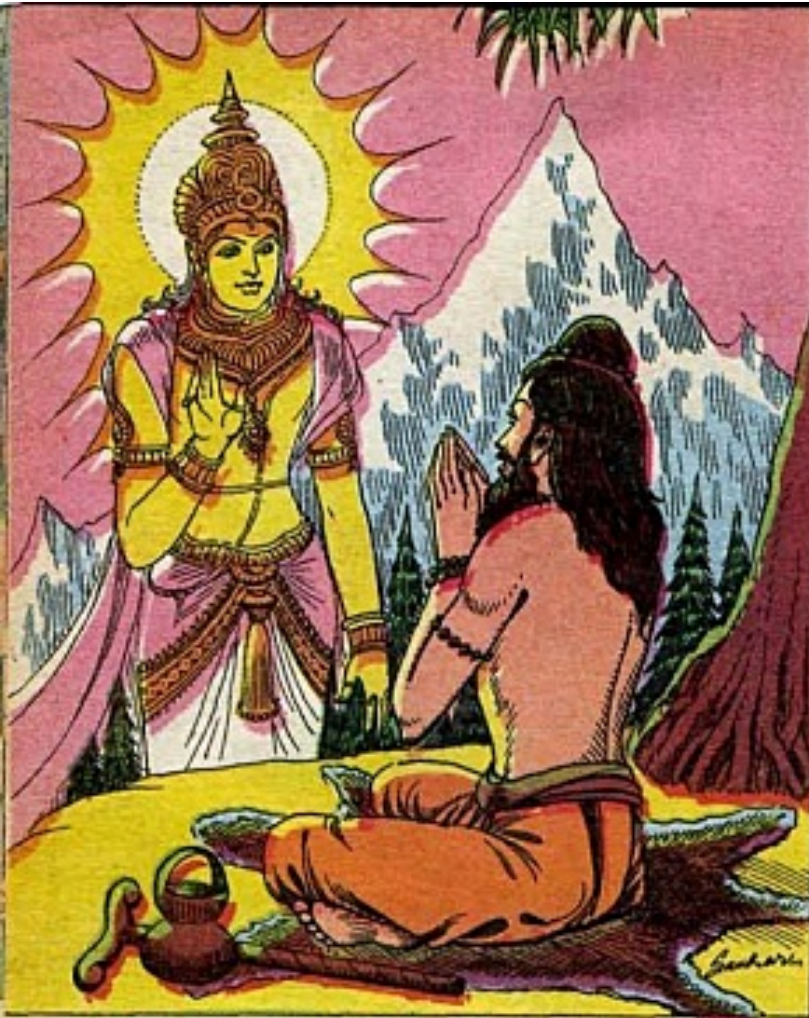
''मैं भी अच्छा मनुष्य हूँ। मैं भी उस पद के योग्य हूँ'' मैंने कहा। ''कोई ऐसा प्रमाण नहीं हैं कि तुम अच्छे मनुष्य हो। तुमने तपस्या की, चक्रवर्ती बनने की इच्छा लेकर। चक्रवर्ती बनने का मार्ग तपस्या नहीं। स्वयंकृषि, शक्ति-सामर्थ्यों से ही कोई उस पद के योग्य बनता है। उस पद को तपस्या से साधने का तुम्हारा मार्ग त्रृटिपूर्ण है।'' यों भगवान ने मुझे चेतावनी दी। तब मैंने पूछा कि तो मेरी इस तपस्या का प्रयोजन ही क्या है?

भगवान ने कहा ''इस तपस्या से तुम्हें कितनी ही अद्‌भुत शक्तियाँ प्राप्त हुई हैं।'' ''तो उन अद्‌भुत शक्तियों का उपयोग करके

भगवान के इस उपदेश से मेरी आँखें खुल गयीं। भगवान से मैंने विनती की कि आप मुझे अपने में समा लीजिये।

''जो-जो जन्म लेता है उसका कोई ना कोई लक्ष्य होता है। अब तक तुम कोई भी लक्ष्य साध नहीं पाये। जिस दिन तुम अच्छे कार्य करोगे और अपने जीवन के लक्ष्य को साधोगे, उस दिन तुम्हें मैं अपने में समा लूँगा।'' यह कहकर भगवान अंतर्धान हो गये।

उस दिन से मैं गॉव-गॉव में घूमकर मानव की सेवा में लगा हूँ।

मतंग की कहानी सुनकर सीताराम समझ गया कि उससे कितनी ही ग़लतियाँ हो गयी

हैं। अपना बादरायण मंत्र जपकर उसने कितने ही लोगों से सहायता पायी। उसके पिता ने भी उसी की तरह इस मंत्र का जप करके बहुत कुछ पाया होगा। दुराशा के प्रलोभन में आकर उस मंत्र का उपयोग आवश्यकता से अधिक किया होगा। जो पाया, उन्हें जब लौटाना पड़ा, तब वे अशक्त हो गये। यों उन्होंने सब कुछ खो दिया। इसीलिए उन्होंने मरने के पहले मुझसे कहा कि दुराशा के कारण ही हमारी ऐसी दुस्थिति हो गयी।

सोच में पड़े हुए सीताराम को मतंग ने तीक्षण दृष्टि से देखा और कहा "पुत्र, तुममें वशीकरण की कोई शक्ति है। जब तक मेरी सहायता नहीं माँगोगे, तब तक मैं यहाँ से नहीं निकल पाऊँगा। तुम्हारी कोई इच्छा हो तो व्यक्त करो, पूरी करूँगा।"

सीताराम मन ही मन कुछ समय तक सोचता रहा और फिर बोला "मुनिवर, चक्रवर्ती बनने की आकांक्षा लेकर आपने तपस्या की। उस तपस्या के फलस्वरूप आप अपनी अद्भुत शक्तियों से मानवों की सेवा में संलग्न हैं। आप जो सेवा कर रहे हैं, इससे आपको चक्रवर्ती बनाने की योग्यता अब प्राप्त हुई है किन्तु अब आपमें चक्रवर्ती बनने की आकांक्षा नहीं हैं।" मतंग ने 'हाँ' कहा।

"मुनिवर, मुझमें चक्रवर्ती बनने की आकांक्षा नहीं है। बस, मुझे इस देश का राजा बना दीजिये" सीताराम ने अपनी इच्छा व्यक्त की। मतंग ने पूछा "क्या भगवान की चेतावनी भूल गये?"

"नहीं स्वामी, मैं राजा को उसके पद से च्युत करना नहीं चाहता। राजा पुत्रहीन हैं। उनकी इकलौती पुत्री है। वे योग्य वर की खोज में हैं। मुझे वर दीजिये कि मैं उस राजकुमारी से विवाह करने की योग्यताएँ पाऊँ और स्वयंवर में उसको अपना बना सकूँ" सीताराम ने कहा।

"तथास्तु। अब तुम्हारे जीवन का एक प्रयोजन है, ध्येय है। तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करके मैं भगवान में ऐक्य हो सकता हूँ।" मतंग ने कहा।

बेताल ने विक्रमार्क को यह कहानी

सुनाकर कहा "राजन्, मतंग मुनि ने अपनी तपस्या के द्वारा जो अद्भुत शक्तियाँ पायीं, उनके बल पर सीताराम को राजा बनाने का वचन दिया, वर दिया। मेरी दृष्टि में यह मतंग का अविवेक और लक्ष्यहीन निर्णय है। सीताराम बादरायण मंत्र के बल पर अपनी इच्छाएँ पूरी कर रहा है। ऐसा स्वार्थी किसी देश का राजा बने तो तुम्ही बताओ, वह राज्य कितने कष्टों में फँस जायेगा, वहाँ की जनता पर क्या-क्या अत्याचार होंगे, उस राज्य में कैसी अव्यवस्था होगी ? इस छोटी-सी बात को तपोसंपन्न मुनि मतंग भी क्यों सोच नहीं पाया ? शीघ्र ही भगवान में ऐक्य होने के प्रयत्न में क्या उसने मनुष्य के दुराशापूर्ण स्वभाव को भुला दिया ? सीताराम की ज़िन्दगी दूसरों की दया पर आधारित थी, उसका अपना कोई प्रयास नहीं था, सुस्त था, स्वार्थी था, फिर भी मुनि ने वर देकर ऐसी भूल क्यों की ? इसका क्या कारण हो सकता है। इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी नहीं दोगे तो तुम्हारा सर फट जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर में कहा "मतंग को मालूम था कि सीताराम स्वयं कोई काम नहीं कर रहा है, वह मंत्र के बल पर दूसरों से सहायता ले रहा है। मतंग ने उसे अपनी कहानी उसे सुनायी थी इसीलिए कि ऐसा करना पाप है। अंतिम दशा में पिता की क्यों इतनी दुस्थिति हुई तथा मतंग के स्वानुभव का सार जानकर सीताराम में परिवर्तन हुआ। जिन-जिन से उसने तब तक सहायता पायी, उन्हें उसे वापस देने के लिए पर्याप्त धन चाहिये। इसके लिए राजा के पद के अलावा कोई और चारा नहीं। इसीलिए सीताराम ने राजा बनने की इच्छा व्यक्त की। मतंग ने उसकी मनोच्छा को जाना और उसे वर दिया। इन कारणों से मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि मतंग का दिया हुआ वर अपात्र वर नहीं है।"

राजा का मौन-भंग होते ही बेताल अदृश्य हो गया और शव सहित पेड़ पर जा बैठा।

**आधार- सत्यभामा की रचना**

# हमारे देश के क़िले -५

# मध्यभारत के क़िले

**रचना : मीरा उग्रा ◆ चित्र : अरित्रा**

मान्दो

मध्यप्रदेश के नैरुती प्रांत में मांडू क़िला है। पहले यह मंडपदुर्ग के नाम से पुकारा जाता था। इस क़िले का पुन: निर्माण बारहवीं शताब्दी में पारमार राजाओं ने किया।

इस क्षेत्र पर १५५० में सुल्तान बाज़ बहादुर ने शासन किया। वह बड़ा संगीत-प्रिय था, शिल्पकला में बहुत ही रुचि रखता था। सुप्रसिद्ध गायनी रूपमती के लिए उसका बनाया गया भवन अति सुंदर था। इस भवन के पास ही से नर्मदा नदी प्रवाहित होती रहती है।

एक बार सम्राट जहांगीर यहाँ सात महीने रहा। अपनी बीबी नूरजहां के लिए उसने १९८ सीढ़ियोंवाला एक महल बनवाया। नूरजहां जब एक-एक सीढ़ी से पहली बार गुज़री, तब हर एक सीढ़ी पर दो-दो सोने की अशर्फी रखी गयीं।

ई.स. ५२५ में सूरजसेन ग्वलिपमुनि के नाम पर ग्वालियर क़िले का निर्माण किया गया। पर्वत पर समतल व चिकने स्थल पर यह क़िला बनाया गया। तोमर राजाओं के शासन-काल में (१३८८-१५१८) इसका वैभव वर्णनातीत था।

तोमर राजाओं के प्रमुखों में से मानसिंह एक था। उसने सुप्रसिद्ध मानमंदिर का निर्माण किया। यह चारमंजिलों वाला था, जिसकी

**मान मन्दिर ग्वालियर**
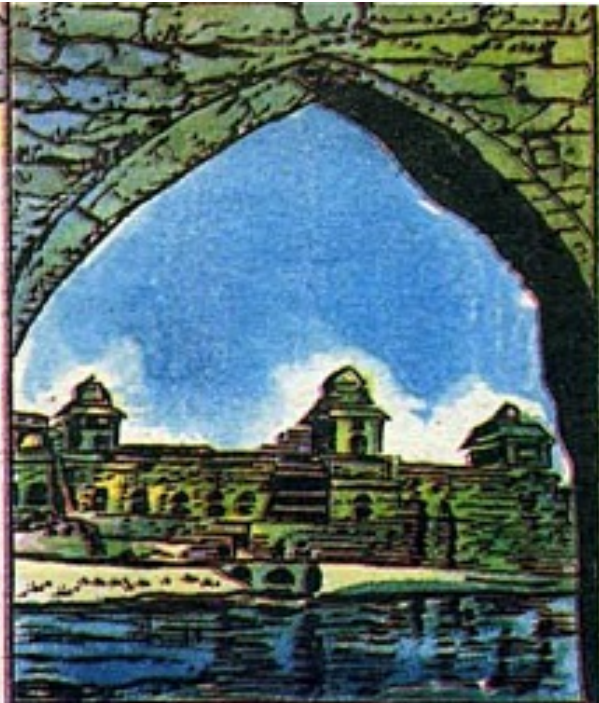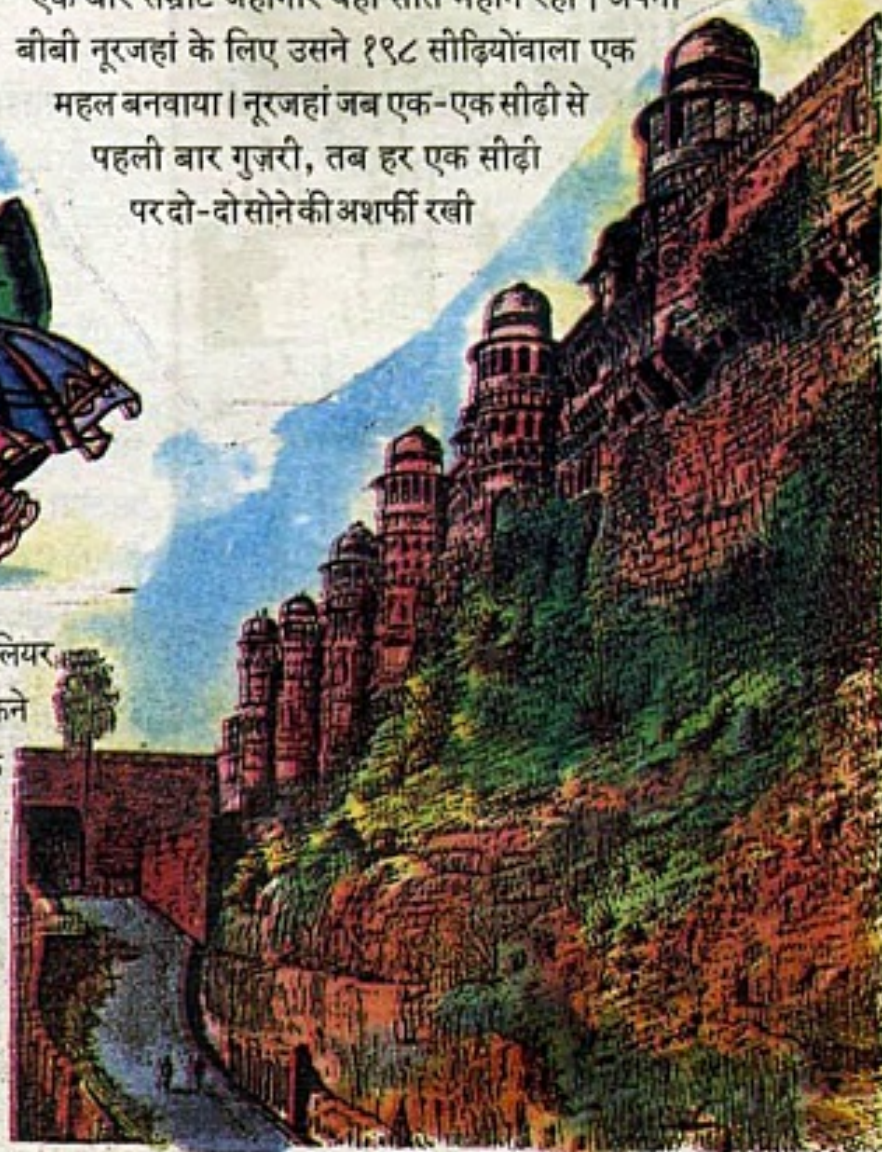
दो मंजिलें भूमि के अंदर हैं। उसके शासन-काल में संगीत और शिल्प-कला का बड़ा आदर हुआ। इन कलाओं का बहुत ही विकास भी हुआ। प्रसिद्ध संगीत विद्वान महम्मद गौस तथा उसके सुप्रसिद्ध शिष्य तानसेन ग्वालियर में ही रहते थे। यहाँ पैदा होकर, पनपी

▲ तानसेन समाधि

▲ आदिनाथ की मूर्ति

संगीत-शैली ग्वालियर घराना संगीत के नाम से प्रसिद्ध हुई।

उरवाही द्वार के समीप की शिलाओं पर जैन तीर्थंकरों की विराट मूर्तियों तराशी गयीं। आदिनाथ की मूर्ति की ऊँचाई है, उन्नीस फुट।

१८५७ में ब्रिटिश शासकों के विरुद्ध विद्रोह हुआ। इस लड़ाई में ग्वालियर के सैनिकों ने भी महत्वपूर्ण भाग लिया। उन्होंने ग़दर के नेता झान्सी लक्ष्मीबाई और तात्या टोपे का साथ दिया। १८५८ में उन दोनों ने ग्वालियर के क़िले को हस्तगत किया और सिंधिया राजा को भगाया, जिसने फिरंगियों का साथ दिया था। किन्तु बाद सर ह्यु रोज़ अपनी सेनाओं को लेकर उनपर टूट पड़ा। १८५८ में यह युद्ध हुआ और इस युद्ध में जून, १७ को लक्ष्मीबाई का निधन हुआ। जहाँ उसके शरीर का दहन हुआ, वहाँ अब भी उसकी समाधि है।

मध्यभारत के चुनारगढ़, रोहतासगढ़, कालिंजर क़िला अजेय व अभेद्य माने जाते थे। पर शेरखां (शेरशा सूर) ने तीन
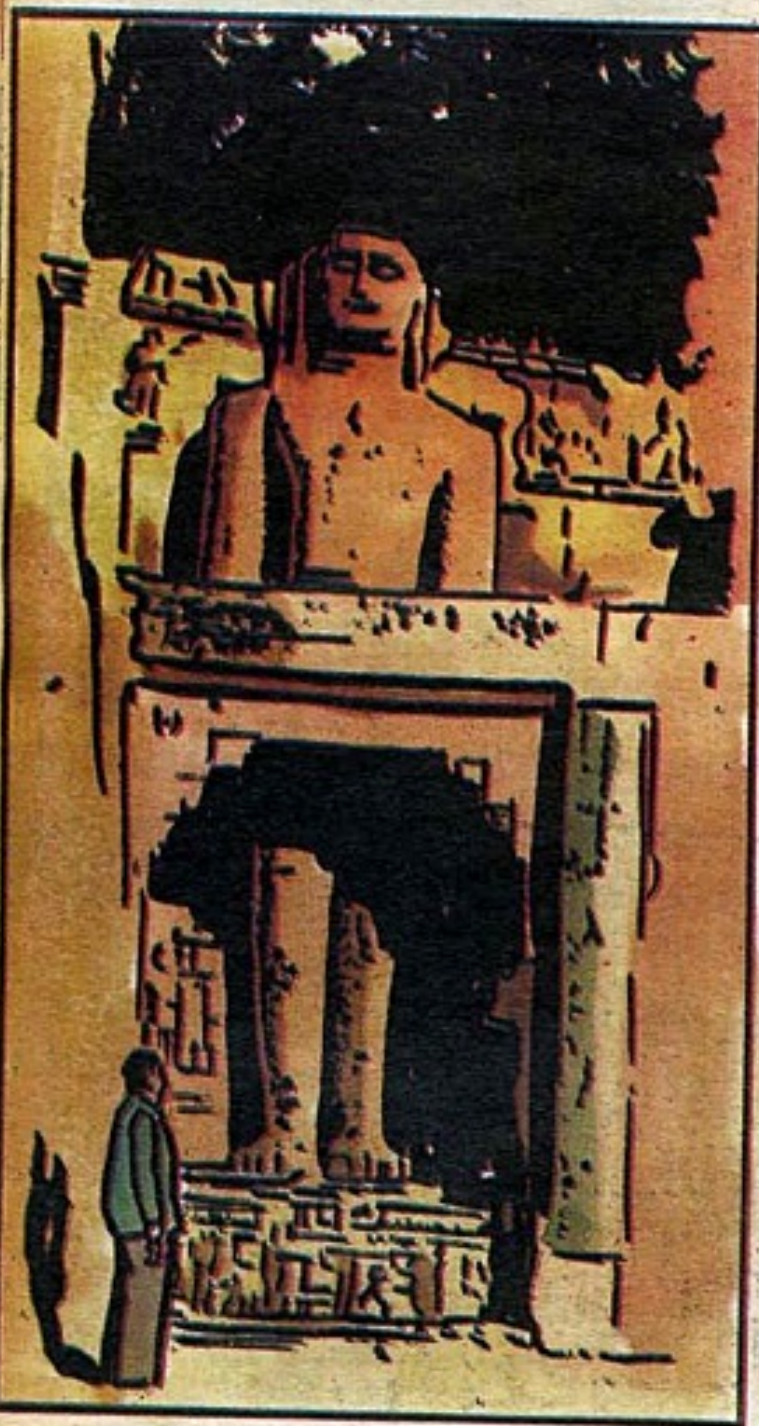
भिन्न मार्गों से इन तीनों क़िलों पर विजय पायी।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के विंध्याचल पर्वत के ऊँचे शिखर पर चुनारगढ़ का निर्माण हुआ। पर्वत एक तरफ़ से गंगा नदी में है। इस कारण उस तरफ़ से शत्रुओं का आक्रमण असंभव है। १५३१ में सूबेदार ताजखां की बेवा बेगम लाडमलिका से शादी की शेरखां ने, जिस वजह से वह इस क़िले को पा सका।

**चुनार गढ़**

चुनारगढ़ शेरखां के वंशजों के अधीन था। १५३८ में हुमायूँ ने इसपर अपना कब्ज़ा पा लिया। इस वजह से शेरखां अपने अड्डे की खोज करने लगा, जहाँ वह रह सके। इसके लिए उसने एक उपाय सोचा, योजना बनायी और अपने परिवार के लिए पनाह माँगी रोहतास गढ़ में। राजपूत राजा ने इसके लिए अपनी स्वीकृति दी। सात सौ पालकियों को क़िले में ढोकर ले गये। क़िले के पहरेदारों ने पचास पालकियों की जाँच करना अनावश्यक समझा और अंदर जाने दिया। बस, थोड़ी ही देर में पालकियों से हथियारों से लैस अफगानी सैनिक बाहर कूद पड़े। जो राजा उन्हें आश्रय देने जा रहा था, उसी को उन्होंने क़िले से भगाया। इस प्रकार शेरखां ने कैमूर के पर्वतों पर निर्मित दुर्भेद्य माने जानेवाले रोहतास गढ़ को अपने वश में कर लिया।

देवकीनंदन खत्री ने 'चंद्रकांता', 'भूतनाथ', 'कुसुम कुमारी' नामक

**रोहतास गढ़**
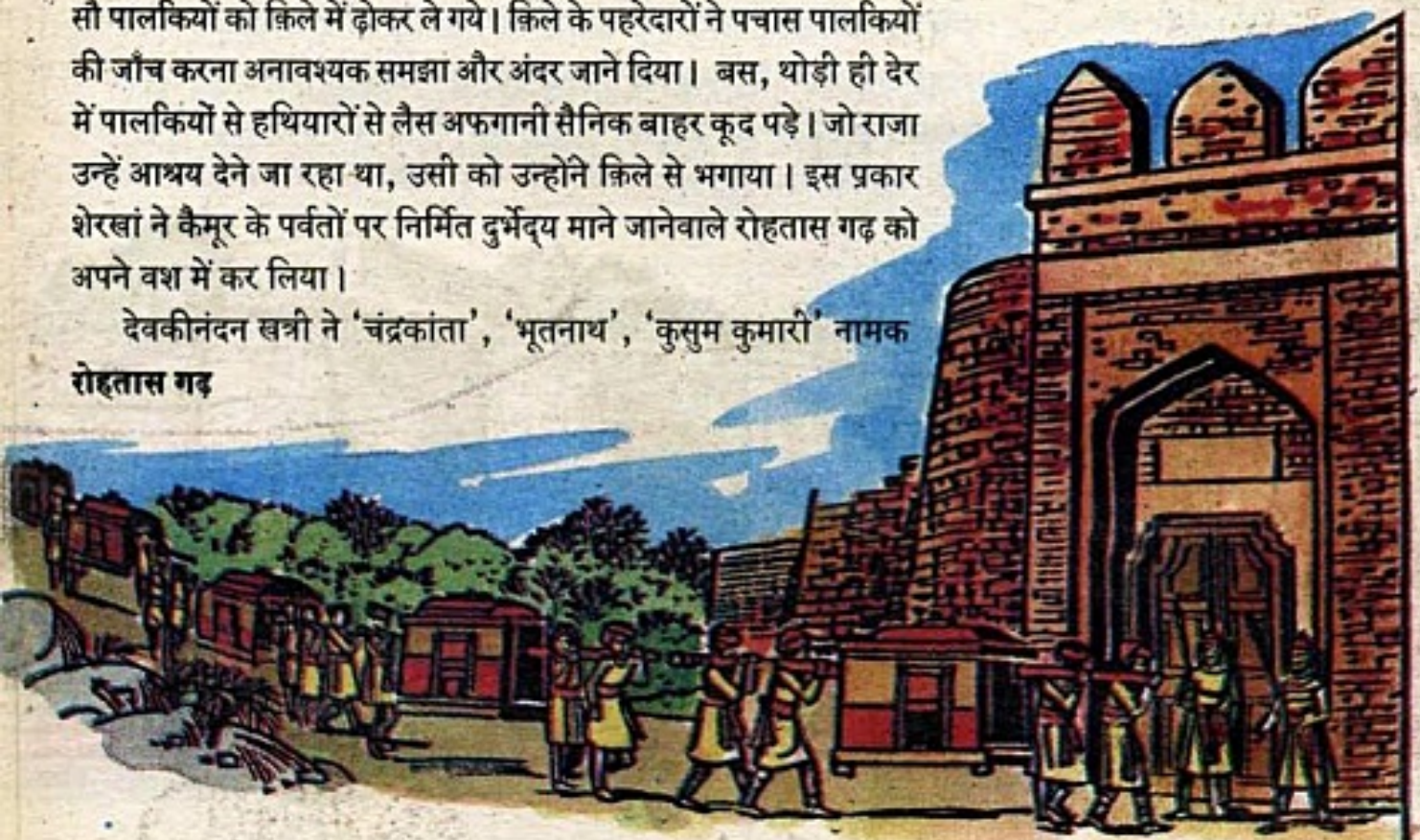
कालिंजर क़िला

साहस भरी, रोमांचकारी उपन्यास लिखे। चुनार, रोहतासगढ़ में घटी घटनाओं ने इस रचयिता को स्फूर्ति दी, प्रेरणा दी।

विंध्याचल पर स्थित कालिंजर क़िला हमारे देश के अति प्राचीन क़िलों में से एक है। ग्रीक इतिहासकार होल्मी ने इसे कनगौर कहकर पुकारा।

१५४५ में शेरशाह सूर की सेनाओं ने जब इस क़िले पर हमला किया तब इसपर शासन कर रहा था, कीर्तिसिंह चंदेल। एक साल तक हमला ज़ारी रहा, पर क़िला उसके हाथ नहीं आया। इसलिए शेरशाह हमले का पर्यवेक्षण करने स्वयं वहाँ आया।

१५४५ मई २१ को अफ़गानी सेनाओं से दागी गयी तोप की एक गोली क़िले के दरवाज़े पर जा लगी और वापस आयी। खुले मैदान में जो गोलियाँ क़रीने से रखी हुई थीं, उनपर गिरी। इससे आग लग गयी और इस आग के खतरे में शेरशाह बहुत ही घायल हुआ। सैनिकों में बदले की भावना तीव्र हुई, वे जोश में आ गये और उन्होंने क़िले की दीवारों को तोड़ डाला। यों उन्होंने क़िले पर कब्ज़ा पाया। कीर्तिसिंह को क़ैद करके मार डाला। किन्तु गोली की वजह से ज़ख्मी शेरशाह भी मर गया था, जिस वजह से उसकी जीत बेकार साबित हुई।

इलाहाबाद का क़िला प्रयाग के समीप के गंगा-यमुना के संगम के निकट है। इसे बनाया, मुगल बादशाह अकबर ने।१५८३ में तीन सौ नौकाओं को लेकर अकबर यहाँ पहुँचा। नवंबर, चौथी तारीख़ को इलाहाबास (इलाहा-आवास) दैब निलय नामक नगर की बुनियाद डाली। बहुत ही नीचे बहती हुई यमुना तथा वेग से प्रवाहित होती हुई गंगा ने किले के निर्माण को कष्टतर बनाया, इसलिए इस क़िले के निर्माण में दस सालों से अधिक समय लगा। छे करोड़ से ज्यादा खर्च हुआ।

१३८० से देखभाल के अभाव में ग्रस्त कौशम्बी अशोक स्तंभ को ब्रिटिशवाले १८३८ में इस क़िले में ले आये और यहाँ उसकी प्रतिष्ठापना की।

इलाहाबाद का क़िला
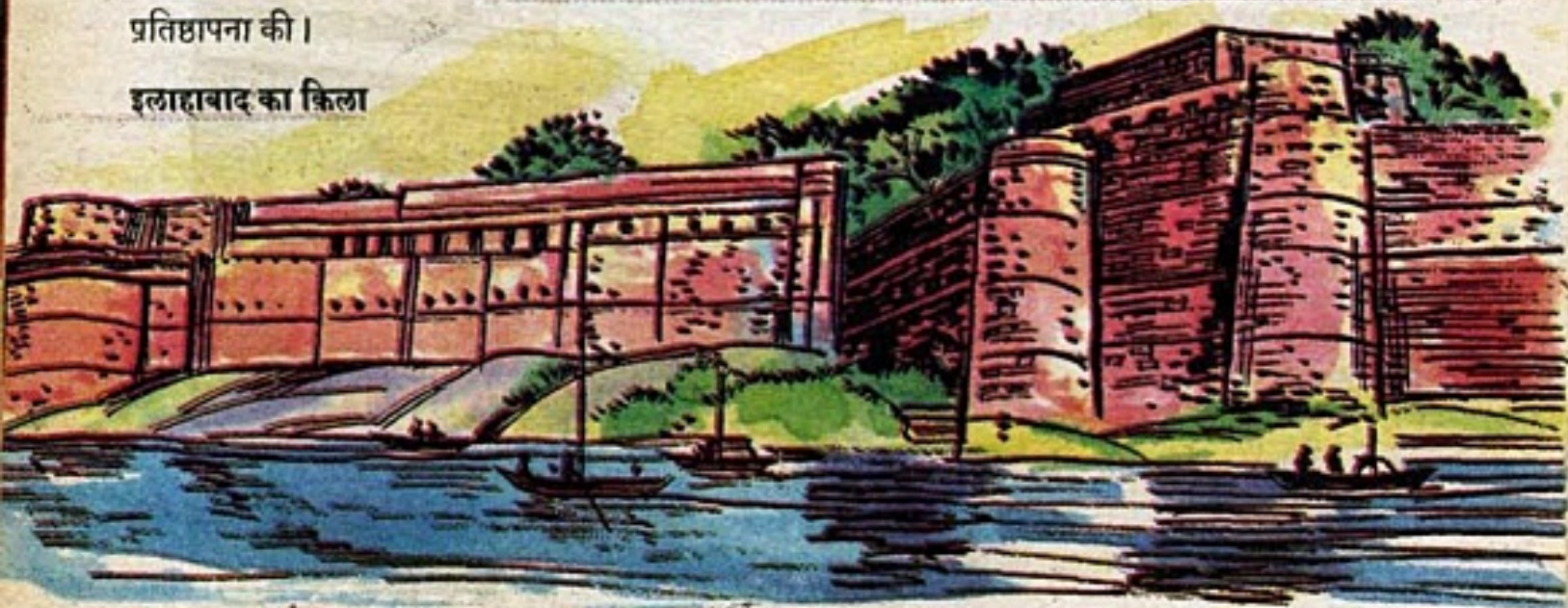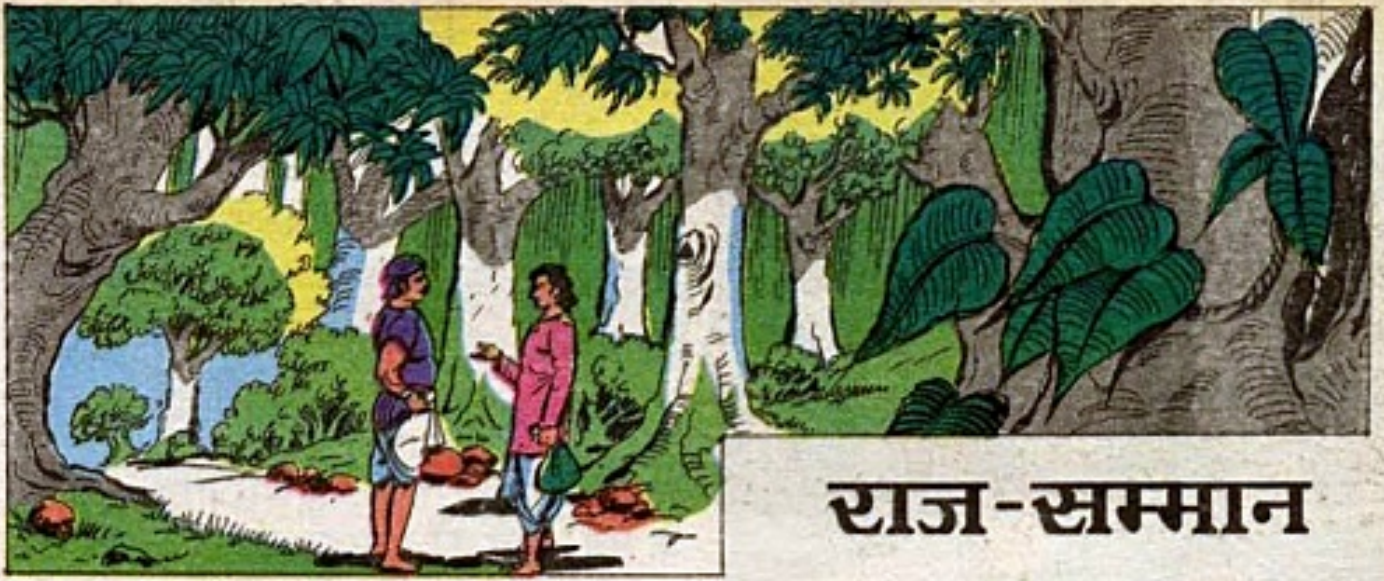
# राज-सम्मान

भास्कर कवि था। राजा से सम्मान पाने की उसकी तीव्र इच्छा थी। इसलिए उस देश के राजा चंद्रभानु की प्रशंसा में बृहत काव्य की रचना की। पर उसे मालूम नहीं हो पाया कि यह काव्य राजा को कैसे सुनाया जाए ? वह सलाह माँगने ग्रामाधिकारी के पास गया।

"मैं जब-जब राजधानी जाता हूँ, तब-तब मेरी मुलाक़ात राज-कर्मचारियों से ही होती है। राजा के दर्शन के संबंध में भला मैं तुम्हारी क्या मदद कर पाऊँगा ? किसी आस्थान-कवि की सहायता से शायद यह काम संभव हो पायेगा।"

भास्कर अपना काव्य लेकर फ़ौरन राजधानी निकला। उसे जंगल से होते हुए जाना था। जब वह जा रहा था तो उसे एक लुटेरे ने रोक दिया और कहा कि जो भी तुम्हारे पास है, मुझे दे दो।

"मेरे पास अब कुछ भी नहीं है। मेरे काव्य को सुनकर राजा प्रसन्न होंगे, धन देंगे तो उसमें से एक भाग तुम्हें अवश्य दूँगा।" भास्कर ने लुटेरे से गिड़गिड़ाया।

लुटेरा चकित हो बोला "तुम कवि हो। तब तो तुम्हें मेरे गुरु से मिलना ही पड़ेगा। वे कवियों को बहुत चाहते हैं। चलो" कहकर भास्कर की आँखों पर पट्टी बाँध दी और थोड़ी दूर ले गया। एक जगह पर ले जाकर उसकी पट्टी खोल दी।

भास्कर ने आँख खोलते ही जान लिया कि पर्वतों के बीच में स्थित एक बड़े महल में हूँ। वहाँ कई चोर, अपराधी और कसाई तरह-तरह के कामों में लगे हुए है। उनका गुरु रेशम के श्वेत वस्त्र पहना हुआ है। उसके मुख-मंडल पर प्रकाश है। लुटेरे ने उससे भास्कर के बारे में बताया।

गुरु ने भास्कर से कहा "मेरा नाम विद्याधर है। कविता से मेरा बड़ा लगाव है।

केतन शर्मा

कविता रचने के लिए यह जंगल बहुत ही सही जगह है। यहाँ प्रकृति आत्मबंधु की मानिंद तुम्हें अपनायेगी, तुमसे बात करेगी। ऐसा सहज वातावरण कवि को प्रेरणा देता है; प्रोत्साहन देता है; उल्लसित करता है। ऐसे स्वच्छ वातावरण में रची जानेवाली कविता प्रभावशाली तथा उत्तम होती है। इसलिए तुम भी मेरे साथ यहीं रह जाओ।''

भास्कर ने कहा ''राज-सम्मान पाने की मेरी आकांक्षा है।'' ''राज-सम्मान? ऐसी आकांक्षा कवियों को शोभा नहीं देती। राजा कवियों से नीच और नित्कृष्ट काम कराते हैं।'' विद्याधर ने गंभीर हो कहा।

''आप अपराधियों के बीच रह रहे हैं और बातें कर रहे हैं राजा की नीचता के बारे में। यह तो हास्यास्पद है।'' भास्कर ने कहा।

''लगता है, मेरे साथ जो-जो लोग हैं, उनके बारे में तुम कुछ भी नहीं जानते। निकट भविष्य में अवश्य ही तुम्हारे विचारों में परिवर्तन आयेगा'' विद्याधर ने कहा।

अंधेरा छा जाने के बाद विद्याधर ने वहाँ के सब लोगों को भागवत के श्लोक सुनाये। उनका अर्थ भी समझाया। जिन-जिन को संदेह थे, उन्हें भी दूर किया।

भास्कर यह सब देखता रहा। वहाँ जो लोग थे, उनमें कोई ख़ासियत उसे दिखायी नहीं पड़ी। 'अंधों में काना राजा' की तरह विद्याधर इनके बीच है। शायद ऐसे ही लोगों के बीच उसकी धाक जमेगी। इसीलिए वह समझता होगा कि यही जगह अच्छी है। यही वैकुंठ है।

उस रात को भास्कर खूब सोया और दूसरे दिन निकल पड़ा। बड़ी ही दया-भरी दृष्टि से उसे देखते हुए विद्याधर ने कहा ''ऐसे श्रोता तुम्हें कहीं नहीं मिलेंगे। यहाँ दिन मज़े से कट जायेंगे। राजा के पास जाकर आख़िर तुम्हें मिलेगा भी क्या ?''

जो भी हो, भास्कर वहाँ रहना नहीं चाहता था। तब विद्याधर ने उससे कहा ''इस जंगल को पार करने के बाद नादपुर पड़ेगा। वहाँ मेरा शिष्य वल्लभ है। वह महाकवि है। उससे मिलो तो तुम्हें अपना

कर्तव्य सूझेगा।''

भास्कर नादपुर पहुँचा। बहुत लोगों से उसने वल्लभ के बारे में पूछा, पर उसका पता नहीं चला। कोई बता नहीं सका कि वल्लभ है कौन और रहता कहाँ है ? आखिर उसने एक चरवाहे से वल्लभ के बारे में पूछा।

''मैं ही वल्लभ हूँ। मुझसे तुम्हें क्या काम है ?'' चरवाहे ने पूछा।

''तुम और वल्लभ ! तुम्हारे गुरु विद्याधर कह रहे थे कि तुम महाकवि हो।'' भास्कर ने आश्चर्य से पूछा।

''तुम्हें विद्याधर ने भेजा ? वे कैसे हैं ? क्या उन्होंने किसी नवीन काव्य की रचना की ?'' वल्लभ ने आतुर हो पूछा।

''मैं नहीं जानता कि विद्याधर कविता रचते हैं या नहीं। वे अशिक्षित लोगों को प्राचीन काव्य पढ़कर सुनाते रहते हैं। तुमने विद्याधर का शिष्यत्व क्यों ग्रहण किया ? कब किया ? तुमने इससे पाया क्या ?'' भास्कर ने वल्लभ से पूछा।

तब वल्लभ ने अपने बारे में बताया। उसने कहा ''मैं एक ग़रीब किसान के घर पैदा हुआ। बचपन से ही मुझे कविता का शौक़ है। जो मन में आये, लिखता था और पशु-पक्षियों को सुनाया करता था। एक बार विद्याधर मेरे गाँव में आये। रात को मंदिर में समाविष्ट लोगों को व्यास रचित 'महाभारत' के श्लोक सुनाये और उनका अर्थ सविस्तार बताया। श्रोताओं के संदेहों को दूर किया। तब मैं उनकी वाक्-पटुता तथा ज्ञान से बहुत ही प्रभावित हुआ। मैंने उनसे पूछा ''महोदय, जब-जब मैं सौंदर्य और अच्छाई को देखता हूँ तब-तब मुझमें कविता उभर आती है। पद रचता हूँ। पर मेरे पदों का अर्थ मुझे ही मालूम नहीं होता। आप सुनिये और बताइये कि वे पद सही हैं या ग़लत। कहकर मैंने उन्हें कुछ पद सुनाये।''

विद्याधर ने उन्हें सुनकर कहा ''पुत्र, तुम सहज कवि हो, साल भर में तुम्हें महाकवि बनाऊँगा।'' मैं उनके साथ गया। भाषा का ज्ञान पाया। तब मैंने एक काव्य लिखा। विद्याधर ने मेरे काव्य की भरपूर प्रशंसा की

और कहा कि तुम सदा ऐसी ही कविता सुनाना चाहते हो तो राजा के आश्रय में मत जाना।

मैं ग़रीब था। गुरु की सेवा-शुशूषा के बाद जब मैं घर पहुँचा तो देखा कि मेरे पिता बीमार हैं। घर का सारा भार मुझे ही संभालना पड़ा। मैं ड़र गया कि इस कारण मुझे कविता रचने की फ़ुरसत नहीं होगी। मैं राजधानी गया। किन्तु राजा के आस्थान की परिस्थितियाँ मुझे नहीं भायीं, इसलिए मैं वहाँ से लौट पड़ा। उस समय मेरे ही गाँव के धनवान रत्नाकर ने मुझे खबर भेजी और मुझसे कहा "तुम मेरे घर-जँवाई बनकर मेरे ही यहाँ रहोगे तो मैं तुम्हारे पिता की देखभाल का आवश्यक इंतज़ाम करूँगा। बिना किसी प्रकार की झंझट के अपनी कविताएँ लिख सकते हो।"

मैंने रत्नाकर की बात मान ली और उनकी बेटी मंजरी से शादी कर ली। मंजरी हठी स्वभाव की थी। मुझसे तरह-तरह के बेकार काम करवाती थी। पशुओं को चराने के लिए भी भेजा करती थी।"

भास्कर ने सहानुभूति जताते हुए कहा "तुम्हारी ज़िन्दगी तो कष्टों से भरी है।"

"अब तो मैं निश्चिंत हूँ। कविता लिखने के लिए अब मेरे पास पर्याप्त समय है। इससे बढ़कर मुझे और क्या चाहिये?" वल्लभ ने कहा।

भास्कर को उसकी बातें सही नहीं लगीं। उसने सोचा कि वल्लभ की कविताओं में गहराई नहीं होगी, इसीलिए राजा ने उसे आश्रय दिया नहीं होगा। वह राजधानी निकल पड़ा।

तब वल्लभ ने उससे कहा "राजधानी में वेदाचार्य नामक एक महान कवि हैं। उनसे तुम मिलो तो वे तुम्हारी मदद करेंगे।"

भास्कर राजधानी पहुँचा। वहाँ पहुँचकर वेदाचार्य के बारे में पूछने पर मालूम हुआ कि वे नगर के कोने के एक आश्रम में रोगियों की चिकित्सा करते रहते हैं। उसे यह सुनकर आश्चर्य हुआ। उसकी समझ में नहीं आया कि एक कवि को रोगियों की चिकित्सा करने

की क्या ज़रूरत ? फिर भी वह आश्रम में गया और वेदाचार्य से मिला।

भास्कर के बारे में पूरे विवरणों की जानकारी पाने के बाद वेदाचार्य ने कहा "पुत्र, राजाश्रय के कारण कवि को कम अवधि में प्रसिद्धि मिलती है। किन्तु राजाओं की सेवा नरक-यातना के समान है। इस सत्य को जानकर ही विद्याधर जंगलों में चला गया। वल्लभ रत्नाकर का दामाद बना। मैं रोगियों की चिकित्सा में लगा हूँ। अच्छा छोड़ो ये सारी बातें। ज़रा दिखाना अपना काव्य।"

भास्कर ने वेदाचार्य को अपना काव्य दिया। काव्य के कुछ पन्नों को पढ़ने के बाद उसने कहा "अब तुम्हारे बारे में मुझे रत्ती भर भी संदेह नहीं। अपने आश्रय में आये कवियों से राजा दास्य-वृत्ति करवाते हैं और तुम्हारा काव्य इसका जीता-जागता उदाहरण है। तुमने तो पहले से ही यह काम शुरू कर दिया। तुम्हें अवश्य ही राजा का आश्रय प्राप्त होगा।"

उसकी बातों से भास्कर का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। उसने पूछा "मैंने ऐसी क्या दास्य-वृत्ति की ?"

"इस काव्य में राजा चंद्रभानु की प्रशंसा के पुल बाँधे गये हैं। इनमें से किसी भी प्रशंसा के वे योग्य नहीं है। योग्यता के अभाव में राजा कवियों से अपनी प्रशंसाएँ लिखवाकर तृप्त होते हैं। अपनी अयोग्यता को ढकने का प्रयत्न करते हैं। उनकी यह विचार-पद्धति निम्न श्रेणी की है। माँगनेवाला और देनेवाला दोनों मेरी दृष्टि में नीच हैं।" वेदाचार्य ने बिना किसी झिझक के कहा।

अब बात भास्कर की समझ में आयी। वह कुछ समय तक राजधानी में रहा और वहाँ के पुस्तकालयों से विद्यानाथ, वल्लभ तथा वेदाचार्य जैसे कवियों के काव्यों का अध्ययन करता रहा।

इसके बाद राजा के दर्शन किये बिना ही गाँव लौट गया। प्रशांत जीवन बिताते हुए उसने वहाँ कुछ काव्यों की रचना की। कभी भी राज-सम्मान के लिए प्रयत्न ही नहीं किया।

# शंकर का वैराग्य

शंकर को ग्रार्हस्थ्य जीवन से विरक्ति हो गयी। वृद्ध माता और पत्नी को छोड़कर देश में संचार करने चला गया। संचार करते-करते वह सकलपुर नामक एक गाँव पहुँचा। उस गाँव में हरे-भरे बाग़-बगीचे थे। कलरव करती हुई बहती नदी थीं, आसपास ही छोटे-मोटे पर्वत थे। प्रकृति कितनी ही शोभायमान दिखाई दे रही थी। इस वातावरण ने उसके मन को मुग्ध कर दिया। उसे वहाँ मालूम हुआ कि गाँव के बाहर नदी के किनारे विद्यानंद स्वामी का आश्रम है। वह उस स्वामी का दर्शन करने उस आश्रम में गया।

विद्यानंदस्वामी ने उसे देखकर बड़े प्यार से पूछा "पुत्र, बोलो, तुम्हें क्या चाहिये?"

"मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कीजिये। आपकी सेवा करते हुए यहीं रह जाऊँगा" शंकर ने कहा।

स्वामी ने शंकर को तीक्षण दृष्टि से देखा और कहा "विद्या सीखने जो ब्रह्मचारी आते हैं, उन्हीं को मैं अपना शिष्य बनाता हूँ। पर तुम ब्रह्मचारी नहीं लगते। नहीं लगता कि यहाँ विद्या सीखने आये हो।"

शंकर ने विनयपूर्वक कहा "स्वामी, आप सर्वज्ञ हैं। भला मैं आपसे सत्य कैसे छिपा सकता हूँ। आपने ठीक ही अनुमान लगाया कि मैं ब्रह्मचारी नहीं हूँ। मेरी पत्नी है, तीन बच्चे हैं, और बूढ़ी माँ है। मेरी पत्नी राक्षसी है, डायन है, झगडालू है। मेरी माँ और उसमें हमेशा झगड़े होते रहते हैं। दोनों, एक पल भी चुप नहीं रहतीं। सास और बहू के झगड़ों में मैं पिसा जा रहा हूँ। मेरी स्थिति बहुत ही चिंताजनक हो गयी है। दोनों में से किसी से भी मैं नहीं कह पाता कि ग़लती तुम्हारी है। ऐसा अगर कभी धीरज से कहूँ भी तो दोनों मुझपर टूट पड़ती हैं। उस घर में मुझसे रहा नहीं गया। मेरे मन की शांति छिन गयी।

इसीलिए मैं परिवार के बंधन से मुक्त होकर, शांति की खोज में, आपकी सेवा में आया हूँ। मुझपर दया कीजिये और अपना शिष्य बनाइये। मेरी संतप्त आत्मा को शांति प्रदान कीजिये।''

विवेकानन्द ने स्पष्ट बता दिया कि गृहस्थों के लिए आश्रम में कोई स्थान नहीं है। फिर भी शंकर ने अपनी हार नहीं मानी। हाथ जोड़े, पैरों पर गिरा और गिड़गिड़ाने लगा। तब स्वामी ने कहा ''तात्कालिक रूप से यहाँ रहने की अनुमति दे रहा हूँ। फिर गंभीरता से सोचकर अपना निर्णय तुम्हें बताऊँगा।''

एक हफ़्ता भी नहीं हुआ, शंकर आश्रम के जीवन से ऊब गया। शंकर को लगा कि आश्रम के कठोर नियमों का पालन उसके लिए संभव नहीं। वहाँ वे जो सात्विक आहार खाते हैं, उसे खाना उससे नहीं हो पायेगा। उसे तो लगा कि घुमक्कड की ज़िन्दगी ही इससे बेहतर है।

आँगन में सोते हुए शंकर को एक दिन रात स्वामी ने जगाया। शंकर ने घबराते हुए पूछा ''बात क्या है, स्वामीजी, क्या हुआ ?''

''ऐसी कोई विशेष बात नहीं शंकर। थोड़ी देर पहले जप करने की इच्छा हुई। बहुत ढूँढ़ा, पर जपमाला मिली नहीं। उठो और उसे ढूँढ़ने में मेरी सहायता करो।'' कहते हुए स्वामी उसे आश्रम के बाहर ले गये।

''स्वामी, क्या आपको याद है कि सोने के पहले आपने जपमाला कहाँ रखी थी ?'' शंकर ने पूछा।
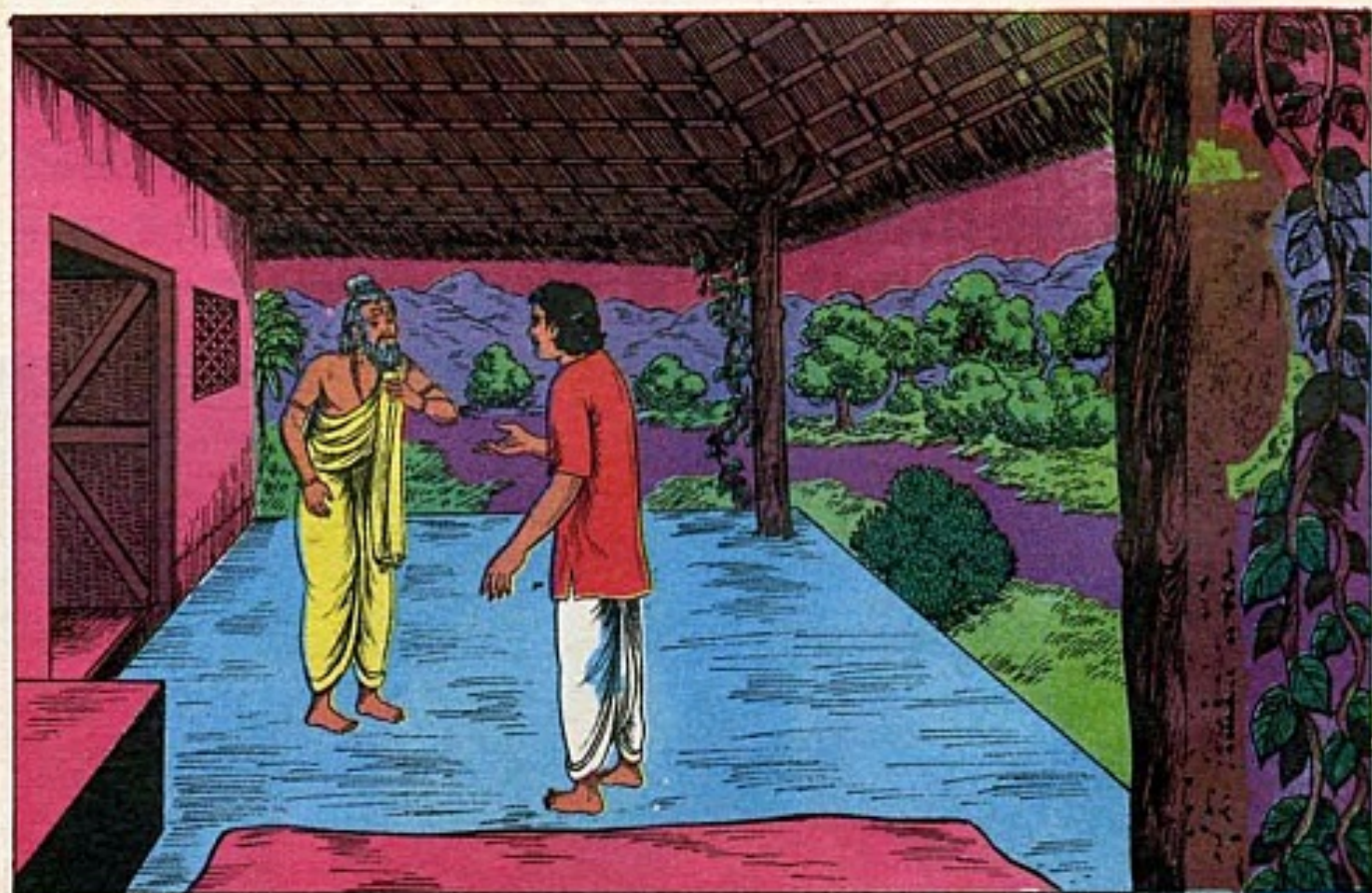
"कमरे के कोने में पडे पाट पर रखी थी, ऐसा याद है। अंदर तो अंधेरा ही अंधेरा हैं, किन्तु आँगन में चाँदनी खिली हुई है" स्वामी ने कहा। दोनों बाहर आये।

स्वामी की बातों पर शंकर को हँसी आ गयी। पर अपनी हँसी को रोकते हुए उसने कहा "स्वामी, जहाँ वस्तु खो दी, उसी स्थल पर उसे खोजनी चाहिये। बाहर आकर खोजने से क्या फ़ायदा। बाहर वह भला कैसे मिलेगी?"

उसके प्रश्न पर विवेकानंद स्वामी थोड़ा मुस्कुराये और बोले "तुमने ठीक कहा। किन्तु तुमने भी तो यही किया। परिवार में जो सुख-शांति तुमने खोयी, उसे ढूँढ़ते हुए देश भर घूम रहे हो। इतनी दूर चले आये हो। सोचा कि इसी तरह कमरे के अंदर रखी हुई वस्तु, बाहर ढूँढ़ने पर शायद मिल जाए।"

शंकर इन बातों के पीछे छिपे गूढ़ार्थ को समझ गया। उसने तक्षण ही स्वामी के चरण छुये और कहा "स्वामी, आपने मेरी आँखें खोल दीं। अभी मैं अपना गाँव चला जाऊँगा। अपने परिवार को संभालूँगा और जो है, उसी में तृप्त रहने का प्रयत्न करूँगा।"

विद्यानंदस्वामी ने शंकर को आशीर्वाद दिया और कहा "इतनी ज़ल्दी क्यों कर रहे हो? रात भर आराम से सोओ। सबेरे अपनी पत्नी को भी लेकर चले जाना।"

पत्नी के बारे में सुनते ही शंकर स्तंभित रह गया। उसे मालूम ही नहीं था कि उसकी पत्नी यहीं है। बात असल में यों थी। उसकी पत्नी को मालूम हुआ कि उसका पति विवेकानंद स्वामी के आश्रम में है। यह जानते ही उसी रात को वह आश्रम में आयी। वह विद्यानंदस्वामी के पैरों पर गिरी और उसने क़सम खायी कि आगे से कभी भी मैं सास से नहीं लडूँगी। मिल-जुलकर रहेंगी। शंकर के मन को ठेस नहीं पहुँचायेंगीं। उसने स्वामी से प्रार्थना की कि आप शंकर के मन में परिवर्तन लाइये और उसे मेरे साथ घर भेजिये।

सबेरा होते ही दोनों ने स्वामी से अनुमति ली और अपना गाँव निकल गये।

संतान की इच्छा लेकर द्रुपद कई आश्रमों में गया। कितने ही मुनियों की सेवाएँ कीं। उसकी तीव्र आकांक्षा थी कि उसका एक पुत्र व एक पुत्री हों। पुत्र के द्वारा वह द्रोण को मारना चाहता था। द्रोण से उसकी बड़ी शत्रुता थी। द्रोण ने उसका आधा राज्य उससे छीन लिया था। पाँडवों की सहायता लेकर उसने उसपर विजय पायी थी। अर्जुन ने गुरु दक्षिणा के रूप में उसे बंदी बनाकर द्रोण को सौंपा था। पुत्री अर्जुन की पत्नी हो, इसी आशा को लेकर वह संचार करता रहा, मुनियों और ऋषियों से मिलता रहा। घूमते-घूमते वह एक आश्रम में गया, जो गंगा नदी के तट पर था। वहाँ याज व उपयाज नामक दो भाई दिन भर वेद-पारायण करते थे और सूर्य की आराधना करते थे। वे काश्यप गोत्र के थे। द्रुपद को लगा कि उपयाज अधिक तपोबल-संपन्न है। इसलिए वह उसी के पास रहने लगा और बडी ही श्रद्धा-भक्ति से उसकी सेवा करने लगा।

एक दिन एकांत में उपयाज के पैर दबाते हुए द्रुपद ने उससे कहा "मुनिवर, द्रोण ने मेरा घोर अपमान किया है। मुझमें अथवा किसी राजा में उस मारने की शक्ति नहीं है। पाँडव और कौरव उसके शिष्य हैं। वे भी अपने गुरु के लिए कुछ भी करने तैयार रहते हैं। जब तक अर्जुन उसके साथ है, तब तक कोई भी उसका कुछ बिगाड़ नहीं सकता। अर्जुन के कारण मैं पराजित हुआ हूँ। उसकी वीरता-शूरता के सम्मुख कोई टिक नहीं सकता। अपने लक्ष्य की प्राप्ति पुत्र-जनन से ही संभव हो पायेगी। मुझे ऐसा पुत्र प्रदान

कीजिये, जो द्रोण को मारने की शक्ति रखता हो। मैं आपको असंख्य पशु-संपदा तथा अनगिनत उपहार दूँगा। जो आप चाहेंगे, उसे देने प्रस्तुत हूँ। मुझपर आप इतनी कृपा दिखाइये। मेरा जन्म सार्थक होगा। मैं अपने लक्ष्य में कृतकृत्य हो पाऊँगा।''

उपयाज ने 'ना' के भाव में अपना सिर हिलाते हुए कहा ''मैं इस दिशा में तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता। ऐसे कामों में किसी का भी साथ नहीं दूँगा।'' उसकी आवाज़ से स्पष्ट लग रहा था कि इस बारे में और अधिक बातें सुनना नहीं चाहता।

द्रुपद, मुनि की बातों से निराश नहीं हुआ। और अधिक श्रद्धा-भक्ति से उपयाज की सेवाओं में रत रहा। यों एक साल गुज़र गया। एक दिन उपयाज ने द्रुपद से कहा ''राजन, तुम बड़ी ही श्रद्धा से मेरी सेवा कर रहे हो। किन्तु तुम्हारी इच्छा अनुचित है। उसकी पूर्ति मैं किसी भी स्थिति में नहीं करूँगा। फिर भी तुम्हें एक उपाय बताऊँगा। तुम मेरे अग्रज याज के आश्रय में जाओ। अपनी सेवाओं से तुम उन्हें संतृप्त करो। उन्हें लालच दो कि असंख्य गायें दूँगा। तुम्हारी इच्छा पूरी होने की संभावना है। पहले ही से वे लालची हैं। एक बार उन्होंने गंदी जगह पर गिरा फल खाया। हम दोनों जब गुरुकुल में विद्याभ्यास कर रहे थे, तब वे शुद्धता व स्वच्छता का पालन नहीं करते थे। जीभ को जो रुचिकर लगे, [illegible] खा जाते थे। इससे स्पष्ट है कि वे ऐहिक सुख को प्रधानता देते हैं।''

उपयाज के कहे अनुसार द्रुपद याज के आश्रम में गया। उसे विनयपूर्वक प्रणाम किया। उसे अस्सी हज़ार गायें समर्पित कीं। फिर अपनी मनोभावना प्रकट की।

याज ने अपनी सम्मति दी। उपयाज को उसने अपना सहायक बनाया और आवश्यक सामग्री को इकट्ठा करके पुत्र-यज्ञ को प्रारंभ किया। होम के बाद आहुति को अपने हाथ में लेकर द्रुपद की पत्नी कोकिलादेवी को बुलाया और कहा ''लो यह आहुति। इससे तुम्हें एक पुत्र और एक पुत्री जन्मेंगे।''

कोकिलादेवी ने कहा ''मुनिवर, अब मैं शुद्ध नहीं हूँ। थोड़ी देर ठहर जाइये। स्नान करके

लौटकर यह स्वीकार करूँगी।"

"तुम्हें क्या शंका है कि मैंने और मेरे भाई ने कठोर दीक्षा लेकर जिस आहुति को पाया, वह तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं करेगी? लेना हो तो ले, नहीं तो छोड़ दो" कहते हुए क्रोध से उस आहुति को अग्नि में फेंक दिया।

उस अग्निकुंड से तक्षण ही एक योद्धा उभर आया। उसके हाथ में चमकती हुई तलवार थी। दूसरे हाथ में धनुष था। शीश पर रत्न-मणियों से खचित मुकुट था। रथारुढ़ हो वह बाहर आया। सिंहनाद करता हुआ कहीं चला गया। इसके बाद उस अग्निकुंड से एक तेजस्वी स्त्री बाहर निकल आयी। यों दृपद ने एक पुत्र व एक पुत्री को पाया। पूरा पाँचाल देश बहुत ही खुश हुआ।

इतने में कोकिलादेवी स्नान करके लौटी। उसने याज और उपयाज से वर पाया कि अग्निकुंड से उत्पन्न दोनों बच्चों की वह माँ बने।

ब्राह्मणों ने दृपद के पुत्र का नाम रखा धृष्टद्युम्न। पुत्री का रंग काला था, इसलिए उसका नाम रखा गया कृष्णा। दृपद ने याज को असंख्य गायें दीं और ब्राह्मणों को विपुल धन-राशि भेंट में दी। अपने लक्ष्य में सफल होकर वह कांपिल्य नगर लौट पडा।

कुछ दिनों के बाद दृपद ने धृष्टद्युम्न को धनुर्विद्या सीखने के लिए द्रोण के पास भेजा। द्रोण इनकार कर ना सका, क्योंकि उसका विचार था कि ऐसा करने पर अपनी बदनामी होगी। इसलिए द्रोण ने उस बालक को समस्त धनुर्विद्याएँ सिखायीं।

दृपद की पुत्री द्रौपदी विवाह-योग्य हुई। पहले से ही दृपद की इच्छा थी कि उसका विवाह अर्जुन से संपन्न हो। उसे मालूम हुआ कि पाँडव लाख-गृह में जलकर राख गये। यह सुनकर दृपद बहुत ही निराश हुआ। उसने अपने मंत्रियों से सलाह माँगी कि अब क्या किया जाए ?

तब दृपद के हितैषी एक पुरोहित ने कहा "महाराज, मुझे लगता है कि पाँडव नहीं मरे। अनेकों शगुनों से संकेत मिल रहे हैं कि वे अब भी जीवित हैं, सुखी हैं। उनके बारे में आप निश्चिंत रहिये। अपनी पुत्री के स्वयंवर की घोषणा कीजिये। मुझे विश्वास है कि वे अवश्य आयेंगे। राजकन्या का स्वयंवर तो परंपरागत रस्म है।"

तीन महीनों के बाद स्वयंवर का मुहूर्त निश्चित हुआ। एक ऐसे धनुष को बनाया गया, जिसकी डोरी की चढ़ाना किसी एक के लिए असंभव है। एक स्थल पर शून्य में चक्राकार में घूमता हुआ सुवर्ण मत्स्य-यंत्र लटकाया गया।

एकचक्रापुर के ब्राह्मण तथा पाँडवों को उक्त सारे विवरण बताते हुए उस अतिथि ब्राह्मण ने कहा "अनेकों राज्यों के राजा द्रौपदी स्वयंवर के लिए निकल पड़े।"

पाँडवों को जब मालूम हुआ कि उनके गुरु द्रोणाचार्य की हत्या करने एक व्यक्ति उत्पन्न हुआ है, तो उन्हें बहुत दुख हुआ। उन्होंने अपने को यह समझाकर शांत कर लिया कि जो होना है, होगा। मन ही मन उन्हें भी द्रौपदी के स्वयंवर पर जाने की इच्छा हुई। उन्हें भी पता नहीं था कि भाग्य उन्हें वहाँ क्यों ले जा रहा है ?

कुन्ती ने उनकी मनोच्छा को भाँप लिया और उसने धर्मराज से कहा "पुत्र, बहुत समय से हम एकचक्रापुर में रह रहे हैं। हम और यहीं रहें तो हो सकता है, हमें भिक्षा भी ना मिले। अच्छा यही होगा कि हम पाँचाल देश चलें। सुना है कि वह सुसंपन्न देश है। कहते हैं कि कांपिल्य नगर बहुत ही सुंदर नगर है। सुनने में आया है कि राजा दृपद ब्राह्मणों पर कृपा-दृष्टि रखते हैं।"

धर्मराज ने अपने भाइयों से भी सलाह-मशविरा किया और माँ के प्रस्ताव की सम्मति देते हुए हर्ष प्रकट किया। घर के मालिक ब्राह्मण से बिदा लेकर वे निकल पड़े।

रात और दिन यात्रा करते हुए एक दिन आधी रात को गंगा-तट पर पहुँचे। वहाँ स्थित सोमश्रव नामक तीर्थ-स्थान पर पहुँचे। घना अंधकार था। अर्जुन सबसे आगे मशाल लिये चलने लगा। वे नदी में स्नान करके अपनी थकावट दूर करना चाहते थे। वे नदी-तट की ओर बढ़ने लगे। उस समय गंगा-नदी में अंगारपर्ण नामक एक गंधर्व अपनी पत्नियों के साथ जलक्रीडाएँ कर रहा था। मनुष्यों की आहट सुनकर वह बाहर आया और चिल्ला पड़ा "तुम लोग कौन हो ? यहाँ से दूर चले जाओ। आसपास जो वन है, पूरा मेरा है। इसपर मेरा ही आधिपत्य है। मैं अंगारपर्ण नामक गंधर्व हूँ। यक्ष, राक्षस गंधर्वों के संचार की वेला है यह। मनुष्यों का संचार इस समय निषिद्ध है।"

अर्जुन उसकी बातों से नाराज़ हो उठा और बोला "ऐ दुष्ट, हिमालय और गंगा नदी किसी की बपौती नहीं है। ये दोनों सबों की हैं। आधी रात हो अथवा भोजन के उपरांत, गंगा को देखने पर उसमें स्नान करना अनिवार्य है, पुण्य है। अतः स्नान किये बिना लौटने का प्रश्न ही नहीं उठता। तुम जो भी हो, हमें इसकी कोई परवाह नहीं है। तुमसे जो हो सके, कर लो। परंतु याद रखना कि तुम कोई साधारण मनुष्यों की शत्रुता मोल नहीं ले रहे हो। हमारा रास्ता रोककर स्वयं अपनी हानि पहुँचा रहे हो। अपने किये पर तुम्हें पछताना होगा।"

अंगारपर्ण क्रोधित हो उठा और बाण बरसाने लगा। उसे मालूम नहीं था कि पाँडव कितने शक्तिशाली हैं। वह समझ बैठा था कि
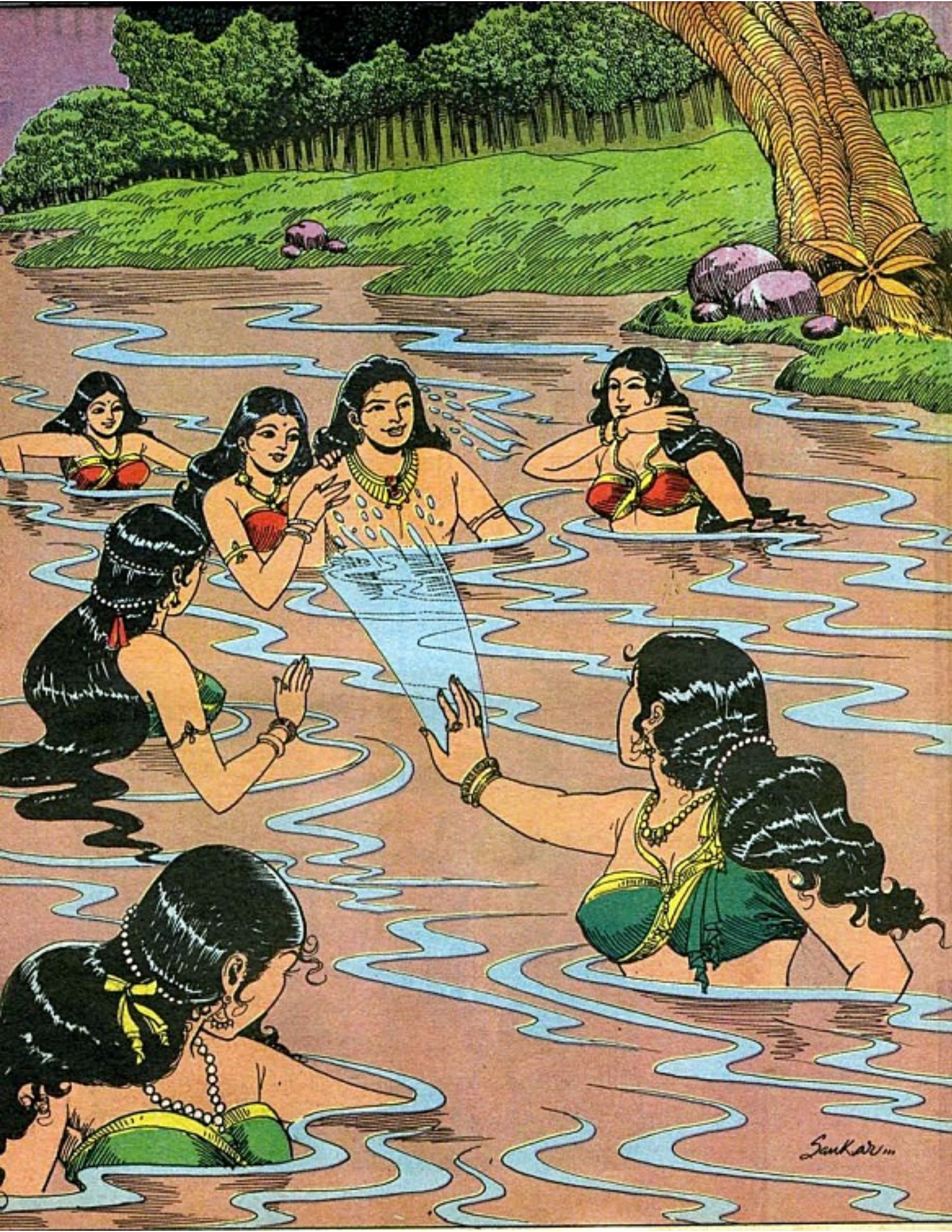
ये साधारण मनुष्य मेरा क्या बिगाड़ सकेंगे। उसने समझा कि उसके बाण उन्हें तहस-नहस कर देंगे। अपने मशाल से अर्जुन ने उन बाणों को रोकते हुए कहा "अरे गंधर्व, अपने इन निठल्ले बाणों से हमें धमकाने के लिए तुमने हमें क्या समझ रखा है ? तुम्हारे मंत्र-तंत्र हमारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते।" कहते हुए अर्जुन ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया। इससे गंधर्व का रथ पूरा का पूरा जलकर भस्म हो गया। गंधर्व नीचे गिरकर मूर्छित हो गया।

इस स्थिति में गंधर्व की पत्नी कुँबीवसी धर्मराज के शरण में आयी। पति-भिक्षा की प्रार्थना करने लगी।

तब धर्मराज ने अर्जुन से कहा "यह हमारी शरण में आयी है। उसके पति को मारना अधर्म है। शरण में आयी हुई स्त्री की रक्षा करना हमारा धर्म है। अपने गंधर्व होने के अहंकार में उससे भूल हो गयी। उसे क्षमा कर दो। अच्छा यही होगा कि तुम गंधर्व को छोड़ दो।"

आग्रज की बातें मानकर अर्जुन ने गंधर्व को छोड़ दिया। तब गंधर्व ने अर्जुन से कहा "मैं तुम्हारे हाथों हार गया हूँ। इस समय से मेरा नाम अंगारपर्ण नहीं होगा। तुमने जो रथ जला ड़ाला है, उसकी जगह पर एक नवीन विचित्र रथ की सृष्टि करूँगा और अपना नाम रखूँगा चित्ररथ। तुम महान वीर हो। मैं तुम्हें चाक्षुषी नामक विद्या प्रसादूँगा। इसकी सहायता से तुम देख पाओगे कि तीनों लोकों में क्या-क्या हो रहा है। हमारे पास यह विद्या है, इसीलिए देवता भी हमें कोई नष्ट नहीं पहुँचा पा रहे हैं। चाक्षुषि के साथ-साथ तुम्हें कुछ दिव्य अश्व भी प्रदान करूँगा। ऐसे अद्‌भुत अश्व सृष्टि में किसी और के पास नहीं हैं। तुम सब भाइयों को सौ-सौ अश्व दूँगा।"

अर्जुन ने कहा "किसी निकट मित्र से भी मैं कभी कुछ भी स्वीकार नहीं करता।"

गंधर्व ने कहा "तब अपनी कोई वस्तु मुझे दो और बदले में मुझसे ये लो।"

अर्जुन ने गंधर्व को आग्नेयास्त्र देकर अश्वों को लेने की स्वीकृति दी।

गंधर्व ने तब अर्जुन से कहा "तुम क्षत्रिय

हो। इसलिए किसी योग्य पुरोहित को नियुक्त करो। उसकी सलाह के मुताबिक चलने पर ही तुम्हारा कल्याण होगा। ऐसा ना करने पर तुम्हारा शुभ नहीं होगा।''

अर्जुन ने उसे आग्नेयास्त्र का प्रयोग मंत्र-सहित समझाया और कहा ''अपने ये अश्व तात्कालिक रूप से अपने ही पास रहने दो। आवश्यकता पड़ने पर मैं मंगा लूँगा।'' कहकर उन सबने उससे बिदा ली। पाँडव, कुन्ती समेत पुनः यात्रा करने लगे।

पाँडव गंगा-तट से निकलकर उत्कोच तीर्थ पर पहुँचे। वहीं धौम्य तपस्या कर रहा ता। पाँडवों ने उसे प्रणाम किया। उससे प्रार्थना की कि वे उनके पुरोहित बनें। धौम्य ने पाँडवों की वीरता, साहस, उत्साह तथा प्रज्ञा को दिव्य दृष्टि से जाना। उसको लगा कि वे उसके पौरोहित्य के योग्य हैं। उनका अतिथि - सत्कार किया और उनका पुरोहित बनने के लिए सहर्ष अपनी स्वीकृति दी। उसकी स्वीकृति प्राप्त करते ही पाँडवों को लगा, मानों संपूर्ण भूमंडल के वे राजा बन गये हों। वे अति आनंदित हुए।

उसी समय द्रौपदी के स्वयंवर में भाग लेने निकले कुछ लोग धौम्य के आश्रम में आये। उनसे मिलते ही पाँडवों ने भी इच्छा प्रकट की कि वे अपनी माता तथा पुरोहित धौम्य के साथ द्रौपदी का स्वयंवर देखने साथ-साथ चलेंगे। ब्राह्मणों के वेष में पाँडवों को देखकर एक ब्राह्मण ने पूछा ''तुम लोग कहाँ से आ रहे हो ? कहाँ जा रहे हो ?''

''हम एकचक्रापुर से कांपिल्य नगर जा रहे हैं'' धर्मराज ने कहा। ''हम भी वहीं जा रहे हैं। वहाँ द्रुपद की पुत्री द्रौपदी का स्वयंवर होनेवाला है। सुना है कि वह अपूर्व सुँदरी है। बहुत-से राजा इस स्वयंवर में अपने भाग्य की परीक्षा करनेवाले हैं। इस अवसर पर जो-जो ब्राह्मण पधारेंगे, उन्हें राजा गोदान, सुवर्णदान और अन्नदान करनेवाले हैं। हम भी उसी स्वयंवर का वैभव देखने जा रहे हैं।'' ब्राह्मणों ने कहा।

दक्षिण पाँचाल में स्थित कांपिल्य नगर की ओर सब लोग मिलकर निकल पड़े।

| 'चन्दामामा' परिशिष्ट - ८० | हमारे देश के वृक्ष |
|---|---|

# दाम्ली

हम लोग विशेष ध्यान दिये बिना जब जाने लगते हैं तब अपने रंग-बिरंगे फूलों से कुछ पेड़ हमें अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऐसे पेड़ों में से दाम्ली प्रमुख है। ये पेड़ अधिकतर मंदिरों में होते हैं। इसलिए इन्हें मंदिरवृक्ष भी कहते हैं। हिन्दू इनके फूलों का उपयोग पूजाओं में करते हैं। चूँकि ये पेड़ हर जगह पनपते हैं, इसलिए बौद्ध इसे अमर मानते हैं। इसे वे अविनाश का चिन्ह मानते हैं। इन पेड़ों को श्मशानों में रोपते है और पनपाते हैं।

यह पेड़ केवल छे फुट तक बढ़ पाता है। टहनियाँ ज़मीन की तरफ़ होती हैं। पेड़ का प्रधान डांठल झुका हुआ होता है। पेड़ के पत्तों अथवा पेड़ के डांठल में गांट करने पर चिकने दूध की तरह का द्रव इसमें से टपकता रहता है। इस पेड़ को वृक्ष-शास्त्र में 'फ्रोंगी मानी' कहते हैं। इसका यह नाम क्यों पड़ा, इसके बारे में तरह-तरह की कहानियाँ बतायी जाती हैं। चूँकि इस पेड से दूध आता रहता है, इसलिए कहते हैं कि फ्रेंचवालों ने उसे इस नाम से पुकारा। यह भी कहते हैं कि इटली के एक आदमी ने इसके फूलों की सुगंधि से सुगंधित तेल बनाया, जिससे उसके नाम पर इस पेड़ का नाम पड़ा। हिन्दी में इस 'दाम्ली', 'गुलचिन', असामी में 'गोलंबी', तमिल में 'कळ्ळिमंदारै', कन्नड में 'काडु संपेंग', मराठी में 'खैर चंपा', ओरिया में 'गोलुची', बंगाली में 'गोरूर चंपा', तेलुगु में 'पालसंपेंग' संस्कृत में 'क्षीरचंपा' कहते हैं।

इसके पत्ते चौड़े, चिकने, लंबे होते हैं। दोनों और नोकदार होते हैं। फूल जब इसमें फूलते हैं, तब इसकी सुँदरता देखते ही बनती है।

इस पेड़ के फलों, फूलों तथा पेड़ से बहते हुए दूध का उपयोग विविध औषधियों तथा तेलों में होता है। इसकी छाल को चर्म की कुछ बीमारियों को दूर करने के लिए इस्तेमाल में लाते हैं।

अलंकार के लिए भी इसके पौधों को रोपते हैं और पनपाते हैं।

# उद्दालक

वेद मंत्रों को, पर्याप्त विवरणों के साथ शिष्यों को सिखानेवालों में से हमारे प्राचीन ऋषि पुंगवों में से प्रमुख थे उद्दालक। वे अरुणा के पुत्र थे, इसलिए उनका अरुणि नामक नाम भी था।

अरुणि को बाल्यावस्था से ही विद्या के प्रति आसक्ति थी, गुरुओं के प्रति श्रद्धा-भक्ति थी। विद्या का अभ्यास करने वे धौम्य के आश्रम में गये। वे उनके शिष्य बने। आश्रम के समीप एक तालाब था और था खेत। धौम्य के यहाँ शिक्षा पाकर उत्तम शिष्यों में से वे एक माने गये। उन्होंने भक्तिपूर्वक अपने गुरुवर की सेवा-शुशूषा की। वे सदा इसी प्रयत्न में रहते थे कि वेद-वेदांगों को संपूर्ण रूप से जानूँ और सीखूँ।

एक दिन रात को भारी वर्षा हो रही थी। आश्रम के समीप ही तालाब के पास आश्रम का ही खेत था। खेत में हरी-भरी फ़सल थी। वर्षा और तीव्र हो जाए तो तालाब की बांध के टूटने की संभावना थी। बांध के टूटने पर खेत पानी में डूब जायेगा और फ़सल का नाश हो जायेगा। इसपर गुरु बहुत ही चिंतित और भयभीत हो गये। तब अरुणि ने कहा "गुरुवर, कृपया मुझे वहाँ जाने दीजिये। वहाँ जाकर मैं आवश्यक प्रबंध करूँगा। खेत को डूबने से बचाऊँगा।"

वर्षा थोड़ी-सी कम हो रही थी, इसलिए गुरु ने अरुणि को वहाँ जाने की अनुमति दी।

अरुणि खेत के पास गया। उसने देखा कि तालाब की बाँध में छेद पड़ गया है। उस छेद में से थोड़ा-सा पानी भी बाहर आ रहा था। उन्होंने ध्यान से उस छेद को देखा। मिट्टी ली और बांध के छेद को ढ़क देने का प्रयत्न किया। किन्तु उस मिट्टी से वे छेद को ढ़क नहीं पाये। मिट्टी पानी में बही जा रही थी। धीरे-धीरे पानी का प्रवाह बढ़ने लगा। अरुणि ने देख लिया कि परिस्थिति क्लिष्ट और गंभीर होती

जा रही है। अरुणि तुरंत ही छेद की जगह पर लेट गये। पानी का बहना बंद हो गया। किन्तु सर्दी अधिक हो गयी और वर्षा ने भी तीव्र रूप धारण कर लिया। परंतु अरुणि जहाँ लेटे थे, वहीं लेटे रहे। एक इंच भी इधर से उधर नहीं हुए। थोड़ी ही देर में वे बेहोश हो गये।

अरुणि के लौटने में बहुत ही विलंब हो गया, इसलिए गुरु धौम्य बहुत ही चिंतित हो गये। वे बड़ी आतुरता से कुछ शिष्यों को अपने साथ लेकर खेत के पास आये।

सबेरा होते-होते वे वहाँ पहुँचे। छेद के पास बेहोश लेटे हुए अरुणि को देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। जब शिष्य उस छेद को मिट्टी से भरने लगे तब उन्होंने अरुणि को उठाकर अपने हाथों में लिया। उन्हें उठाकर अपने आश्रम में ले गये। आग के पास उन्हें लिटाया। थोड़ी ही देर में उन्हें होश आया।

बड़े प्यार के साथ गुरु ने उनसे कहा "अरुणि, तुमने प्रमाणित कर दिया है कि आज तुम्हारा विद्याभ्यास सफलतापूर्वक समाप्त हो गया।"

अरुणि वेद-वेदांगों में प्रकांड पंडित थे, फिर भी आवश्यकता पड़ने पर शरीर-श्रम करने से पीछा नहीं हटते थे। अन्यों के कल्याण के लिए अपने प्राण-त्याग पर भी वे तुल गये। पर उन्हें इस बात का गर्व ही नहीं था। उन्होंने इसे अपनी जिम्मेदारी मानी। अपने शिष्य के कर्तव्य-पालन पर गुरु अति प्रसन्न हुए।

उत्तरोत्तर अरुणि, उद्दालक के नाम से प्रख्यात हुए। वे सर्वश्रेष्ठ गुरु बने। शिष्यों के प्रेम और आदर के पात्र बने। उनका कीर्ति-ध्वज फहराने लगा।

# क्या तुम जानते हो?

१. खजरहो मंदिर हमारे देश के किस राज्य में हैं ?
२. पनडुब्बी का आविष्कार पहले पहल किसने किया ?
३. मलाई और दूध में से कौन-सा वज़नदार है ?
४. सिक्खों के पवित्र ग्रंथ का क्या नाम है ?
५. नोबेल पुरस्कार प्राप्त विजेताओं से सबसे कम उम्र के कौन हैं ?
६. 'साल्टलेक' के नाम से पुकारा जानेवाला स्टेडियम कहाँ है ?
७. पागल कुत्तों के काटने पर उसकी चिकित्सा के लिए किसने टीका को खोज निकाला ?
८. बिल्ली की जाति के सब जंतुओं के पंजो की रक्षा के कवच होते हैं। केवल एक जंतु के कवच नहीं है। इस जंतु का क्या नाम है ?
९. कालेंडर की पद्धति कौन-सा देश पहले पहल अमल में ले आया ?
१०. हमारे देश में हर साल किस प्रांत में 'नेहरु नावों की होड' चलती है ?
११. एक नगर है, जिसका निर्माण १३ द्वीपों पर हुआ है। उसे 'जलनगर' कहते हैं। उस नगर का क्या नाम है ?
१२. सर्वप्रथम पेशवा कौन थे ?
१३. रोम नगर किस नदी-तट पर बसा है ?
१४. पहली व्योमनौका का क्या नाम है और उसका प्रयोग कब हुआ ?
१५. दस सालों के पहले चेस के विश्वचांपियन कौन थे ?
१६. चमगीदड़ कितने वेग से उड़ सकता है ?
१७. 'थायलांड' का प्राचीन नाम क्या है ?
१८. मादा ब्लाकबर्ड का रंग भिन्न होता है। उसका क्या रंग है ?
१९ हवा के लिए बाहर आये बिना तिमिंगल कितनी देर तक अंदर रह सकता है ?
२० 'चीन' की करेन्सी क्या है ?

## उत्तर

१. मध्यप्रदेश
२. क्लामियेस वान ड्रेबेट
३. दूध
४. आदिग्रंथ, ग्रंथ साहब
५. विलियम लारेन्स ब्राग
६. कलकत्ता
७. लूयी पाश्चर
८. चीता
९. ईजप्ट
१०. केरल के आलप्पी के समीप
११. स्टाकहोम
१२. बालाजी विश्वनाथ (१७१३ से १७२० तक)
१३. टैबर नदी
१४. स्पुटनिक, १९५७ में
१५. आँटोनी कार्पोव
१६. घंटे में लगभग ६० कि.मी. की रफ़्तार से
१७. सयाम
१८. गेहूँ का रंग
१९. बीस मिनिट
२०. युवान

# शिष्टों का हास्य

धनवान प्रफुल्ल की बुद्धि वक्र थी, टेढ़ी थी। सुखी और संतुष्ट लोगों को कष्ट पहुँचाकर, उन्हें पीड़ित करके सुख पाना उसकी आदत थी। उसकी इस गंदी आदत से उसकी पत्नी ऊर्मिला बहुत ही दुखी थी।

यह बात ऊर्मिला के भाई भूषण को मालूम हुई। उसने अपने बहनोई को सही मार्ग पर ले आते का निश्चय किया। वह एक बार प्रफुल्ल के घर आया। प्रफुल्ल ने उसका स्वागत किया और उसे बताया कि किस-किस को उसने सताया और कैसे सताया। वह हँसता जा रहा था और अपनी करनी बताये जा रहा था।

भूषण ने उसकी सारी बातें सुनने के बाद कहा "तुम जो बातें बता रहे हो, उनसे मुझे तो हँसी ही नहीं आ रही है। मुझे तो यह सुनकर दुख हो रहा है। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम हँस क्यों रहे हो ?"

"हास्य-विनोद एक कला है। वह हर किसी के लिए संभव नहीं। कल सभा में आओ। तुम्हीं देखना, अभी जो-जो बातें तुम्हें बतायीं, उन्हीं बातों पर सभासद किस प्रकार ठठाकर हँस पड़ेंगे ?" प्रफुल्ल ने कहा।

दूसरे दिन सचमुच ही सभा में उक्त बातों पर सभी सभासद हँसते रहे। भूषण को सभासदों की प्रवृत्ति पर आश्चर्य हुआ। घर लौटकर उसने ऊर्मिला से इसका कारण पूछा। उसने कहा "हँसेंगे नहीं तो करेंगे क्या ? जो नहीं हँसते, उन्हें चाबुक से मारा जायेगा। वह दंड उन्हें भुगतना ही पड़ेगा।"

"तुम्हारा पति क्या महाराज है ? चाबुक से मारने से क्या सभासद चुप रह जायेंगे ?" भूषण ने और आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा।

"वे सभासद ग़रीब है। गालियाँ सुनने, सहने तुम्हारे बहनोई उन्हें धन देते हैं। जो भी वे बतायेंगे, उन्हें सुनना ही पड़ेगा। जिन्हें यह सम्मत है, वे ही सभा में प्रवेश पा सकते हैं। सब

धन की महिमा है।" बहन ऊर्मिला ने भाई को कारण बताया।

विवरण जानने के बाद प्रफुल्ल जब अकेला था, तब भूषण ने उससे कहा "लगता है, तुम्हें मालूम नहीं, हास्य क्या है ? तुम जैसे आदमी के साथ रहने के कारण ही तुम्हारी पत्नी और तुम्हारे नौकर हमेशा दुखी और शोक-मग्न रहते हैं।"

"छोड़ों उनकी बातें। उनके चेहरे ही ऐसे हैं। उनकी सूरतों से तो दुख टपकता है। तुमने स्वयं सभा में आकर देख लिया ना कि मेरा हास्य लोगों को कितना पसंद हैं ? मेरी बातें सुनते ही वे लोग कितना खिलखिलाकर हँस पड़े।" प्रफुल्ल ने कहा।

"हास्य का यह अर्थ नहीं कि धन देकर दूसरों से हँसाओ। हास्य तो ऐसा होना चाहिये, जिसे सुनकर लोग अपने दुखों को भुलाकर हँस पड़ें।" भूषण ने कहा।

यह सुनते ही प्रफुल्ल का चेहरा फीक़ा पड़ गया। उसने कहा "अच्छा, तुम्हें असली बात मालूम हो गयी। क्या तुम धन देकर हँसा सकते हो ?" यह भूषण को उसकी चुनौती थी।

"मैं हँस सकता हूँ, लेकिन हँसा नहीं सकता। हँसाना एक बड़ी कला है। हमारे गाँव में चतुर नामक एक युवक है। वह जब बातें करता है तो मगर की आँखों से भी आनंद के आँसू बहते हैं।" भूषण ने कहा।

प्रफुल्ल ने कहा "तो उसे ज़ल्दी बुलाओ।"

भूषण की ख़बर पाकर दूसरे ही दिन चतुर आया। प्रफुल्ल ने उससे कहा "मेरे साले ने बताया था कि तुम हँसाने में बेजोड़ हो। तुम्हारी परीक्षा लेने मैंने तुम्हें यहाँ बुलाया है। हाँ, परीक्षा होगी थोडी-बहुत कठोर। सह पाओगे ?"

चतुर एकदम हँस पड़ा। हँसता ही रहा। "क्यों यों हँसे जा रहे हो ?" प्रफुल्ल ने चिढ़ते हुए पूछा।

"भूषणजी ने बताया था कि आपकी हर बात में हँसी झलकती है। मैंने सोचा कि यह भी हास्य होगा, इसलिए हँस पड़ा" चतुर ने कहा।

"होगा समझकर हँस रहे हो। कैसी बेतुकी बातें कर रहे हो ? क्या हास्य तुम्हारी समझ के बाहर है ?" प्रफुल्ल ने पूछा।

''समझ के बाहर थोड़े ही हैं। अच्छी तरह समझता हूँ। किन्तु जो मेरी परीक्षा लेनेवाले हैं, उनसे अच्छा नाम पाना भी ज़रूरी है। इसीलिए मैं हँसा'' चतुर ने कहा।

उसकी बातें सुनकर भूषण, ऊर्मिला तथा शेष जितने भी वहाँ थे, हँस पडे। उनकी इस हँसी से चिढ़ता हुआ प्रफुल्ल बोला ''अर्थहीन बातों पर हँस पड़ोगे तो चाबुक से पीटे जाओगे। सावधान।''

भूषण ने कहा ''बहनोइजी, सभा बुलाइये। ऐलान कीजिये कि जो-जो चतुर की बातों पर नहीं हँसेगा, उसे नक़द दी जायेगी। यह भी कहिये कि जो हँसेंगे, उन्हें चाबुक से मारा जायेगा। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि चुतुर सबको हँसाकर ही रहेगा।''

प्रफुल्ल ने 'हाँ' कह दिया। उसने साले की चुनौती स्वीकार कर ली। तब चतुर ने कहा ''महाशय, मेरी एक विनती है। हँसाने के लिए मैं वहाँ कुछ भी कह जाऊँगा। मैं कुछ भी बोलूँ पर आप अपना मुँह नहीं खोलेंगे।'' यो उसने अपनी शर्त रखी।

प्रफुल्ल ने उसकी शर्त स्वीकार की। दूसरे दिन सभा का आयोजन हुआ। बाज़ी के बारे में लोगों को मालूम हो चुका था, इसलिए बड़ी संख्या में लोग आये।

सभासदों के सम्मुख खड़े होकर चतुर ने कहना प्रारंभ किया ''महाशयो, भगवान ने मुझे हँसाने की शक्ति दी। कहते हैं कि हँसी आनंद के कारण आती है। कहावत भी है कि आनंद आधी शक्ति है। लेकिन कहते भी हैं कि
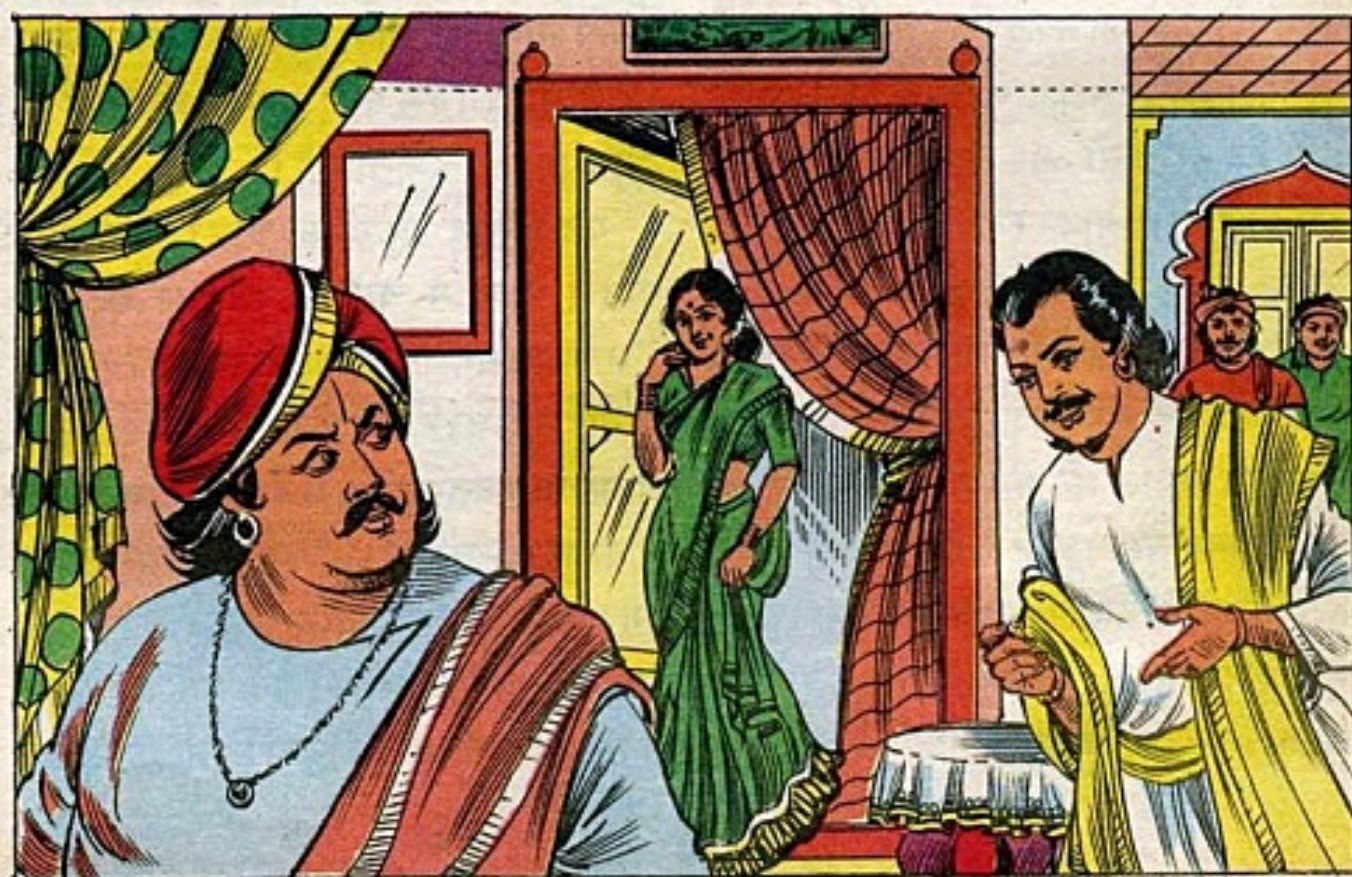
हँसी से तरह-तरह के नष्ट भी पहुँचते हैं। आप सब लोगों को मेरे हँसाने से दो तरह से नष्ट पहुँचेगा। एक-जो नक़द मिलती थी, वह नहीं मिलेगी। दूसरा-चाबुक से पिटाई। मतलब यह हुआ कि मेरी हँसी आप लोगों के लिए रुलाई साबित होगी। हँसाकर रुलाना मुझे अच्छा नहीं लगता। इकट्ठे इतने लोगों को रुलाने के बदले अच्छा यही होगा कि मैं अकेले ही रोऊँ। आप लोगों को हँसा नहीं सका, इसलिए आप सब लोगों पर चाबुक की मारें जितनी पड़ेगी, वे सब मैं भुगत लूँगा। आप में से एक आगे आइये और गिनिये कि उपस्थित सभासद कितने हैं।''

प्रफुल्ल ने सोचा तक नहीं था कि चतुर ऐसा कहेगा। वह हक्का बक्का रह गया। सभा में कम से कम तीन सौ लोग होंगे। उनमें से कम से कम कुछ लोगों को चतुर हँसा पाता तो कुछ चाबुक की मारों से बच पाता। प्रफुल्ल सोच में पड़ गया कि चतुर ने ऐसा क्यों किया ?

इतने में सभा में कानाफूसी शुरु हो गयी। शोरगुल होने लगा। अचानक सभी सभासद एकदम हँस पड़े। थोड़ी देर तक सभा उनकी हँसी से गूँज उठी।

तब चतुर ने आश्चर्य से सभिकों को देखकर कहा ''महाशयो, मैंने अभी हास्योक्तियाँ शुरु ही नहीं कीं और आप लोग हँस पड़े। मैं जान सकता हूँ, आप हँसे क्यों ?''

सभिकों में से एक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ और बोला ''हम हँसेंगे तो हर एक को एक-एक चाबुक की मार खानी पड़ेगी। उतना दंड हम भुगत सकेंगे। आप जैसा एक शिष्ट व्यक्ति अकेले इतनी मारें खायें, हमसे देखा नहीं जायेगा। इसीलिए हम हँस पड़े। आपको बचाने में ही हमें आनंद है, हमें तृप्ति है।''

यह सुनकर प्रफुल्ल का चेहरा फीका पड़ गया। इतने में चतुर ने सभिकों से कहा ''मानवता धन के सामने नहीं झुकती। दंड की परवाह नहीं करती। यह जताने के लिए ही मैंने आपसे ऐसा बताया था। मैं मानता हूँ कि प्रफुल्ल में भरपूर मानवता है। यह झूठ है कि वे मुझे दंड देंगे। किन्तु आपको अवश्य ही दंड देंगे। मैं अब जान गया हूँ कि कोड़े की एक मार आप सह सकते हैं। इसलिए अब बिना किसी संकोच के

हास्योक्तियाँ प्रारंभ करूँगा।''

प्रफुल्ल ज़ोर से चिल्लाने ही वाला था कि सभिकों को ना हँसाने पर चतुर को दंड देकर ही रहूँगा, भूषण ने उसे रोका और कहा ''बहनोईजी, चतुर की शर्त के अनुसार आपको बीच में बोलने का कोई हक नहीं। क्या आप उस शर्त को भूल गये ? सभिकों का हँसना तो कभी का ख़तम हो गया।''

प्रफुल्ल कुछ बोल नहीं पाया। तब चतुर प्रफुल्ल की ही कहानी हास्य - पद्धति में लोगों को सुनाने लगा। उसने कहा ''श्री प्रफुल्ल सामने जो कहा जाता है, वे उसी का विश्वास करते हैं। भगवान प्रत्यक्ष होकर उन्हें वर देना चाहते थे तो इन्होंने कहा, जितने भी लोग मुझे जानते हैं, वे मेरे लिए जो सोचते हैं, चाहते हैं, वही हो। तब से श्री प्रफुल्ल सड़क पर गिरते रहते हैं, कपड़े काँटों से लगकर फट जाते हैं, गाँव के कुत्तेउनका पीछा करते रहते हैं, नौकर उनसे काम करवाते रहते हैं। आख़िर बैल ने उन्हें गाड़ी में जोता और ख़ुद गाड़ी में जा बैठा।'' इस प्रकार प्रफुल्ल की यातनाएँ चतुर कहा जा रहा था तो लोग ठठाकर हँसते जाने लगे।

प्रफुल्ल ने अपनी हार मान ली किन्तु कहा ''हास्य का मतलब है, वह सब को खुश रखे, हँसा सके। पर, तुम्हारे हास्य ने मुझे दुखी कर दिया।''

''वक्रबुद्धि व बुराई के कारण चिढ़ने में भी बहुत हास्य है। यह हास्य बुरे लोगों को चिढ़ाता है और अच्छे लोगों को आनंद पहुँचाता है। इस आनंद को पाने के लिए आदमी को चाहिये कि वह बुराई छोड़े और अच्छे आदमी में परिवर्तित हो'' चतुर ने कहा।

लोग इस बात पर खुश हो रहे हैं कि उसपर क्या बीत रही है, वह कितना गिरा हुआ आदमी है, मानवता उसमें किस हद तक लुप्त हो गयी है, इस सत्य को जान गया प्रफुल्ल। वह जान गया कि यह सब उसके बुरे स्वभाव व बुरी नीयत का फल है। वह जान गया कि हास्य विशिष्ट कला है। धन अथवा ओहदे का लोभ दिखाकर इसे वशीभूत नहीं कर सकते। उसने अपने स्वभाव को बदल लिया। चतुर का सत्कार किया और भूषण को कृतज्ञता प्रकट की।
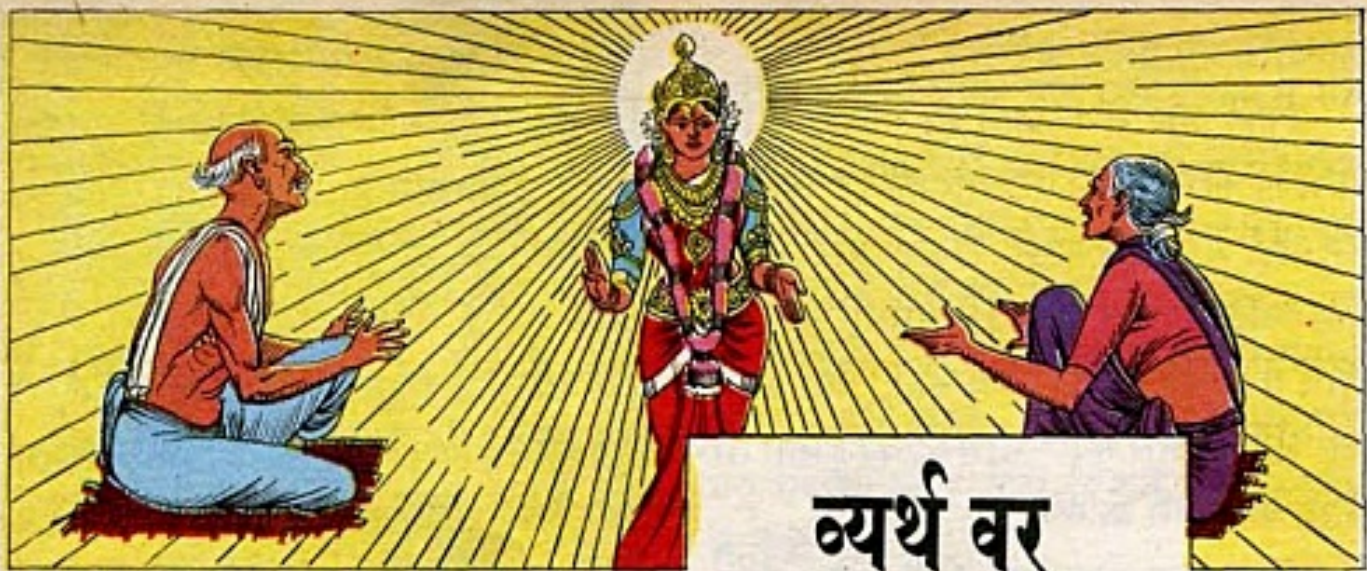
# व्यर्थ वर

जंगल ही के पास के एक गाँव में एक लकड़हारा अपनी पत्नी के साथ झोंपड़ी में रह रहा था। हाँ, वे ग़रीब थे, काफ़ी मेहनत करके अपनी जीविका कमा रहे थे, फिर भी उनका जीवन सुख से गुज़रने लगा।

उनकी झोंपड़ी के पास ही कुछ संपन्न लोगों ने अपने घर बनाये। उनको और भी सुखी देखकर लकड़हारे और उसकी पत्नी के मन में ईर्ष्या ने घर कर लिया।

घर में बैठे पति-पत्नी एक दिन इसी बात को लेकर बातें कर रहे थे। पत्नी ने दुख प्रकट करते हुए कहा "कुछ लोग जन्म से धनी होते हैं। पर हमारी नसीब में यह लिखा हुआ नहीं है। अगर हमारे पास भी अधिक धन होता तो अपनी ज़िन्दगी और आराम से काटते।"

"मुझसे पूछा जाए तो मैं यहीं कहूँगा कि ये धनी सुखी नहीं है। अगर मेरे पास धन होता, इनसे भी अधिक सुखी जीवन बिताता।" लकड़हारे ने कहा।

"सुना है कि पुराने ज़माने में देवी-देवताएँ प्रत्यक्ष होते थे और वर देते थे। कितना अच्छा होगा, अगर कोई देवी-देवता प्रत्यक्ष हो जाए और हमें वर दे।" पत्नी ने कहा।

उसकी बात पूरी भी नहीं हुई कि इतने में अकस्मात् एक स्त्री प्रत्यक्ष हुई।

"मैं देवी हूँ। मुझे मालूम हैं कि आप वर पाने के लिए बहुत ही बेचैन हैं। आप लोगों को मैं सिर्फ़ तीन वर दे रही हूँ। इससे अधिक वरों की अपेक्षा मुझसे मत कीजिये। उन्हीं से तृप्त रहिये" देवी यह कहकर अदृश्य हो गयी।

इस आकस्मिक घटना से दोनों आश्चर्य में डूब गये। वे निर्णय नहीं कर पाये कि कौन-सा वर माँगना चाहिये। वे सोच में पड़ गये। उस समय उनकी स्थिति बड़ी ही विचित्र थी।

"मुझसे पूछा जाए तो मैं यही कहूँगी कि जिस वर को माँगने पर संपन्न लोगों की तरह

**पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी**

हम रह सकें, ऐसा वर माँगा जाए'' पत्नी ने बड़े उत्साह के साथ कहा।

''रहने दे अपनी यह भद्दी सलाह। धन के होने मात्र से क्या रोग हमसे दूर भागेंगे? चोर हमारे घर में घुसकर हमें नहीं लूटेंगे? इसलिए मेरा तो विचार है कि हम ऐसा वर माँगे, जिससे हम स्वस्थ रहें, हमारी लंबी आयु हो।'' पति ने पत्नी का खंडन करते हुए कहा। ''लंबी आयु हो तो क्या लाभ? दरिद्रता में लंबे काल तक सड़ते रहने के लिए?'' पत्नी ने नाराज़ हो कहा। ''तुम ठीक ही कह रही हो। निर्णय लेने में हमें ज़ल्दबाजी नहीं करनी चाहिये। अच्छी तरह सोच-विचार के बाद ही निर्णय लेंगे'' पति ने कहा।

पत्नी रसोई बनाने निकली। आग सुलगाती हुई उसने कहा ''आज के खाने में मछली होती तो कितना अच्छा होता।'' उसके यह कहते ही बहुत-सी मछलियाँ ऊपर से गिरीं।

पति जान गया कि तीन वरों में से एक की पूर्ति हो गयी है तो उसने पत्नी से कहा ''अरी बावरी, तुमने यह क्या कर दिया? तुमने तो एक वर को बेकार कर दिया। अच्छा तो यह होता कि ऐसे वर को माँगने के बदले, माँग लेती कि ये सारी मछलियाँ मेरे गले में हार बन जाएँ।'' दूसरे ही क्षण वे सारी मछलियाँ उसके गले के हार के रूप में बदल गयीं। हार उसके गले में चमक रहा था।

''तुमने भी एक वर को निरर्थक कर दिया। हम दोनों ने दो वरों को व्यर्थ किया। भूल दोनों से हुई।'' कहती हुई उस हार को अपने गले से निकालने लगी। लेकिन मछलियों का हार उसके चर्म से चिपक गया था। वह निकल नहीं रहा था। पति भी उसको निकालने में असफल हुआ। ''छी.छी. यह क्या हो गया? हम कहीं के नहीं रहे। इन मछलियों की तरकारी खा भी नहीं सके। यह हार गले से ना निकली तो मैं आत्महत्या कर लूंगी। इतना बड़ा अपमान मैं सह नहीं सकूंगी।'' पत्नी ने रोते हुए कहा।

अब बेचारा लकड़हारा क्या करे? अब एक ही उपाय था। जो तीसरा वर बाक़ी था, उसे माँगकर हार गले से निकाल दिया जाए। उसने तीसरा वर भी माँग लिया। अब हार को आसानी से गले से निकाल पाया। पति-पत्नी की मूर्खता के कारण तीनों वर निष्फल हुए।

Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

SUPER
RUBBER
It's time to go back to school again. Time for text books. Time for games. Time to meet old friends. And make new ones. Time to start studying again. Because there's so much to learn about the world around you.
From all of us here at Chandamama, have a great year in school. And remember to tell us what you've learnt everyday, when you come home from school !
THE
CHANDAMAMA
COLLECTION
ARTIG1246

# फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

**पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, सितंबर, १९९५ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।**

Mahantesh C. Morabad
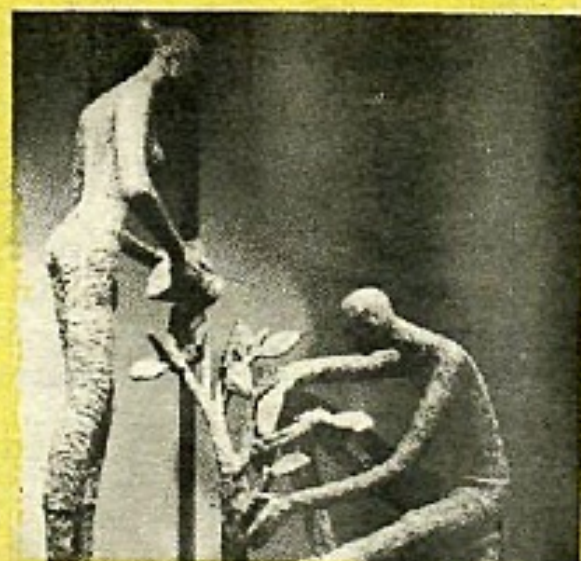
Mahantesh C. Morabad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० जुलाई, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

**चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.**

---

## मई, १९९५, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **मदारी आया खेल दिखाने**

दूसरा फोटो : **नहीं, नहीं, मुझको बहलाने**

प्रेषक : **सौरभ गाँधी**

**C/o.श्री बी.एल. गाँधी २, भरावा कुई, रतलाम - (म.प्र.) पिन - ४५७००१**




*Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India)* and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.


---

Eagle Water Bottles
we're all game for it
How about you?
Congo
Waves
Volga
Brooks
Amazon
• For cool, hygienic & odourless water.
• Useful at school & while travelling.
• Zingy shapes & colours to choose from.
• Available in capacities ranging from 325 ml. to 2200 ml.
OVER 1 LAKH SURPRISE GAMES TO BE WON
NO ENTRY FEE
No Purchase Required
EAGLE FLASK INDUSTRIES LTD.
There's a lot you can do with Eagle.
To win a surprise game, match the names of Eagle Water Bottles with the phrases given below.
And get this coupon stamped from your nearest Eagle outlet.
A Brooks ☐ A river in South America
B Amazon ☐ A river in Russia
C Congo ☐ Movement of sea
D Volga A Streams of water
E Waves ☐ A country in West-Central Africa
Name:.................................B'day.......
Address:.............................................
Entries must reach the following address before 31/8/95. Eagle Flask Industries Ltd., Eagle Estate, Talegaon-410507. Dist.Pune. Tel: 02114-22321-25. Fax: 02114-22676.
Winners will be intimated by post.
DART/EF/9750